वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला का पुष्प नं. 13
ISBN-978-93-82071-63-1

जम्बूद्वीप

–लेखिका –

जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी,
दो बार डी.लिट्. की मानद उपाधि से अलंकृत
परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी

पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी के चारित्रवर्धनोत्सव वर्ष 2012-2013 के अन्तर्गत माताजी के 58वें आर्यिका दीक्षा दिवस के अवसर पर प्रकाशित

-प्रकाशक-

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान
जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.
फोन नं.- (01233) 280184, 280994
Website : www.jambudweep.org, E-mail : jambudweeptirth@gmail.com
Facebook : jaintirthjambudweep

तृतीय संस्करण	वीर नि. सं. 2539	मूल्य
1100 प्रतियाँ	वैशाख कृ. दूज, 27 अप्रैल 2013	20/-रु.

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान द्वारा संचालित

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला

इस ग्रन्थमाला में दिगम्बर जैन आर्षमार्ग का पोषण करने वाले हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत, कन्नड़, अंग्रेजी, गुजराती, मराठी आदि भाषाओं के न्याय, सिद्धान्त, अध्यात्म, भूगोल-खगोल, व्याकरण आदि विषयों पर लघु एवं वृहद् ग्रंथों का मूल एवं अनुवाद सहित प्रकाशन होता है। समय-समय पर धार्मिक लोकोपयोगी लघु पुस्तिकाएँ भी प्रकाशित होती रहती हैं।

–: संस्थापिका एवं प्रेरणास्रोत :–

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि श्री ज्ञानमती माताजी

–: मार्गदर्शन :–

प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका श्री चन्दनामती माताजी
(पीएच.डी. की मानद उपाधि से अलंकृत)

–: निर्देशक एवं सम्पादक:–

कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

–: प्रबंध सम्पादक :–

जीवन प्रकाश जैन

सर्वाधिकार प्रकाशकाधीन

प्रथम संस्करण-1974
द्वितीय संस्करण-सन् 1981, प्रतियाँ-2200

कम्पोजिंग - ज्ञानमती नेटवर्क, जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर (मेरठ) उ.प्र.

सम्पादकीय

–स्वस्तिश्री पीठाधीश रवीन्द्रकीर्ति स्वामी जी

परमपूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी द्वारा लिखित यह ''जंबूद्वीप'' नाम की यह पुस्तक भगवान् महावीर स्वामी के २५००वें निर्वाण महोत्सव के समय सन् १९७४ में प्रकाशित हुई थी। इसकी अत्यधिक मांग होने से इसका द्वितीय संस्करण जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति सेमिनार के समय सन् १९८१ में प्रकाशित किया गया पुनः अब इसका तृतीय संस्करण प्रकाशित किया जा रहा है। यह पुस्तक बड़े-बड़े ग्रन्थों के आधार से तैयार की गयी है। इसको पढ़कर हम जंबूद्वीप के विषय को संक्षेप से भली प्रकार समझ सकते हैं तथा यह जान सकते हैं कि भूगोल के सम्बन्ध में जैनाचार्यों की क्या मान्यता रही है। यह पुस्तक समस्त विद्वानों के लिए भी इस विषय की मार्गदर्शक के रूप में है क्योंकि संक्षिप्त होते हुए भी इसमें समझने के लिए सारा विषय गर्भित है। भूगोल का विषय अत्यन्त सूक्ष्म है। सभी पदार्थ आज दृष्टिगोचर नहीं हैं फिर भी उनका अस्तित्व सम्यग्दृष्टि को स्वीकार करना ही पड़ेगा। हम इस दिशा में प्रयत्नशील हैं कि हमारे जैन आगम के परिप्रेक्ष्य को लक्ष्य में रखकर कहाँ तक भूमंडल की शोध की जा सकती है।

जैनागम के चतुरनुयोगों का तलस्पर्शी ज्ञान प्राप्त कर उसके प्रत्येक विषय सिद्धान्त, भूगोल-खगोल, अध्यात्म, व्याकरण, न्याय, अलंकार आदि में पूर्ण निष्णात जैन समाज की सर्वोच्च साध्वी परम पूज्य गणिनी प्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी ने पृथ्वी पर जैन भूगोल को साकार रूप प्रदान करते हुए सर्वप्रथम हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना निर्माण की प्रेरणा दी, पुनः तेरहद्वीप रचना और तीन लोक रचना का भी निर्माण उनकी प्रेरणा से हुआ है जिसके माध्यम से हम जैन भूगोल की विस्तृत जानकारी आसानी से प्राप्त कर सकते हैं।

अतः जैन भूगोल की जानकारी प्राप्त करने के इच्छुक भव्य प्राणी इस पुस्तक तथा इसमें वर्णित सम्पूर्ण रचना का साकार रूप जम्बूद्वीप के माध्यम से जैन भूगोल का विस्तृत ज्ञान प्राप्त करने में सक्षम होवें यही मंगलकामना है।

आद्यमिताक्षर

–गणिनी आर्यिका ज्ञानमती

यह तीनलोक अनादिनिधन—अकृत्रिम है। इसको बनाने वाला कोई भी ईश्वर आदि नहीं है। इसके मध्य भाग में कुछ कम तेरह राजू लंबी, एक राजू चौड़ी और मोटी त्रसनाली है। इसमें सात राजू में अधोलोक है एवं सात राजू ऊँचा ऊर्ध्वलोक है तथा मध्य में निन्यानवे हजार चालीस योजन ऊँचा और एक राजू चौड़ा मध्यलोक है अर्थात् सुमेरु पर्वत एक लाख चालीस योजन ऊँचा है। इसकी नींव एक हजार योजन है जो कि चित्रापृथ्वी के अंदर है। चित्रा पृथ्वी के ऊपर के समभाग से लेकर सुमेरु पर्वत की ऊँचाई निन्यानवे हजार चालीस योजन है। वही इस मध्यलोक की ऊँचाई है। यह मध्यलोक थाली के समान चपटा है और एक राजू तक विस्तृत है।

इसके ठीक बीचों-बीच में एक लाख योजन विस्तृत गोलाकार जम्बूद्वीप है। इस जम्बूद्वीप के ठीक बीच में सुमेरु पर्वत है। इस जम्बूद्वीप में दूने-प्रमाण विस्तार वाला अर्थात् दो लाख योजन विस्तृत चारों तरफ से जम्बूद्वीप को वेष्टित करने वाला लवणसमुद्र है। आगे इस समुद्र को वेष्टित करके चार लाख योजन विस्तार वाला धातकीखण्डद्वीप है। उसको चारों ओर से वेष्टित करके आगे आठ लाख योजन विस्तार वाला कालोदधि समुद्र है। उसको चारों तरफ से वेष्टित करके सोलह लाख योजन विस्तृत पुष्कर द्वीप है। ऐसे ही एक-दूसरे को वेष्टित करते हुए असंख्यातों द्वीप और समुद्र हैं।

अन्त के द्वीप का नाम स्वयंभूरमणद्वीप है और अन्त के समुद्र का नाम स्वयंभूरमण समुद्र है।

पुष्करद्वीप के बीचों-बीच में एक मानुषोत्तर पर्वत स्थित है जो कि चूड़ी के समान है। इसके निमित्त से इस पुष्कर द्वीप के दो भाग हैं। इसमें पूर्व अर्धपुष्कर में धातकीखण्ड के सदृश मेरु, कुलाचल, भरतक्षेत्र, गंगा, सिंधु नदियाँ आदि की व्यवस्था है। यहीं तक मनुष्यों की उत्पत्ति है। मानुषोत्तर पर्वत के आगे केवल तिर्यंच और व्यन्तर आदि देवों के ही आवास हैं अतः एक जम्बूद्वीप, दूसरा धातकी खण्ड, तीसरा आधा पुष्कर द्वीप ऐसे मिलकर ढ़ाई द्वीप होते हैं। इन ढ़ाई द्वीपों में ही मनुष्यों की उत्पत्ति होती है और इनमें स्थित कर्मभूमि के मनुष्य ही कर्मों का नाशकर मुक्ति को प्राप्त कर सकते हैं, अन्यत्र नहीं।

इस प्रकार से तीनों लोकों का ध्यान करना चाहिए। धर्मध्यान के चार भेदों में अन्तिम संस्थानविचय नाम का धर्मध्यान है जिसके अन्तर्गत तीन लोक का ध्यान करने

का वर्णन है। इसी प्रकार विरक्त होते ही तीर्थंकर जैसे महापुरुष भी जिनका चिंतवन करते हैं ऐसी द्वादशानुप्रेक्षा में भी लोकानुप्रेक्षा के वर्णन में तीन लोक के स्वरूप के चिंतवन का आदेश है।

तीनलोक के वर्णन को समझने के लिए त्रिलोकभास्कर पुस्तक को देखना चाहिए और अधिक विस्तृत विवेचन के जिज्ञासुओं को तिलोयपण्णत्ति, त्रिलोकसार आदि ग्रंथों का स्वाध्याय करना चाहिए।

प्रस्तुत पुस्तक में केवल मात्र संक्षेप से जम्बूद्वीप का वर्णन है जो कि बहुत ही सरल और स्पष्ट है। इसमें सात क्षेत्र और सुमेरु पर्वत आदि का बहुत ही रोचक वर्णन है। आजकल बहुत से लोग प्रश्न किया करते हैं कि जम्बूद्वीप ऊपर स्वर्ग में है या पृथ्वी पर ? हमसे कितनी दूर है ? कोई पूछ बैठते हैं कि विदेह क्षेत्र इस पृथ्वी के नीचे है या ऊपर ? इन सभी का स्पष्टीकरण इस छोटी सी पुस्तक में किया गया है।

कुछ लोग योजन के प्रमाण के बारे में शंकाये उठाते रहते हैं। योजन का प्रमाण शास्त्रीय आधार से क्या है ? इसका स्पष्टीकरण 'प्राक्कथन' में दे दिया है।

प्रस्तुत पुस्तक को पढ़कर जैन भूगोल का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए।

प्राक्कथन

–ब्र. मोतीचंद जैन*

पुद्गल के सबसे छोटे टुकड़े को अणु–परमाणु कहते हैं।

ऐसे अनंतानंत परमाणुओं का	१ अवसन्नासन।
८ अवसन्नासन्न का	१ सन्नासन्न
८ सन्नासन्न का	१ त्रुटिरेणु
८ त्रुटिरेणु	१ त्रसरेणु
८ त्रसरेण	१ रथरेणु
८ रथरेणु का—उत्तम भोगभूमियों के बाल का	१ अग्रभाग
उत्तम भोगभूमियों के बाल के ८ अग्रभागों का	मध्यम भोगभूमियों के बाल का १ अग्रभाग
मध्यम भोगभूमियों के बाल के ८ अग्रभागों का	जघन्य भोगभूमियों के बाल का १ अग्रभाग
जघन्य भोगभूमियों के बाल के ८ अग्रभागों का	कर्मभूमियों के बाल का १ अग्रभाग
कर्मभूमियों के बाल के ८ अग्रभागों की—	१ लीख।
८ लीख का	१ जूं
८ जूं का	१ जव
८ जव का	१ अंगुल

इसे ही उत्सेधांगुल कहते हैं, इससे ५०० प्रमाणांगुल होता है।

६ उत्सेधांगुल का	१ पाद।	
२ पाद का	१ बालिस्त	
२ बालिस्त का	१ हाथ	नोट–२००० धनुष का १ कोस है।
२ हाथ का	१ रिक्कू	अतः १ धनुष में ४ हाथ होने
२ रिक्कू का	१ धनुष	से ८००० हाथ का १ कोस
२००० धनुष का	१ कोस	हुआ एवं १ कोस में २ मील
४ कोस का	१ लघुयोजन	मानने से ४००० हाथ का एक
५०० योजन का	१ महायोजन	मील होता है।

* समाधिस्थ पीठाधीश क्षुल्लक श्री मोतीसागर महाराज (सन् १९८७ में दीक्षित) द्वारा सन् १९८१ में लिखित

एक महायोजन में २००० कोस होते हैं।

अंगुल के तीन भेद हैं—उत्सेधांगुल, प्रमाणांगुल और आत्मांगुल।

बालाग्र, लिक्षा, जूँ और जौ से निर्मित जो अंगुल होता है वह 'उत्सेधांगुल' है।

पाँच सौ उत्सेधांगुल प्रमाण एक 'प्रमाणांगुल' होता है। जिस-जिस काल में भरत और ऐरावत क्षेत्र में जो मनुष्य हुआ करते हैं उस-उस काल में उन्हीं-उन्हीं मनुष्यों के अंगुल का नाम 'आत्मांगुल' है।

उपर्युक्त उत्सेधांगुल से ही उत्सेध कोस एवं चार उत्सेध कोस से एक योजन बनता है। यह लघुयोजन है।

उत्सेधांगुल से—देव, मनुष्य, तिर्यंच एवं नारकियों के शरीर की ऊँचाई का प्रमाण और चारों प्रकार के देवों के निवासस्थान व नगर आदि का प्रमाण होता है।

प्रमाणांगुल और प्रमाण योजन से—द्वीप, समुद्र, कुलाचल, वेदी, नदी, कुंड, सरोवर, जगती और भरतक्षेत्र आदि इन सबका प्रमाण जाना जाता है।

आत्मांगुल से—झारी, कलश, दर्पण, वेणु, भेरी, युग, शय्या, शकट, हल, मूसल, शक्ति, तोमर, वाण, नालि, अक्ष, चामर, दुंदुभि, पीठ, छत्र, मनुष्यों के निवास नगर और उद्यान आदि का प्रमाण जाना जाता है।

एक महायोजन में २००० कोस होते हैं। एक कोस में २ मील मानने से १ महायोजन में ४००० मील हो जाते हैं अतः ४००० मील के हाथ बनाने के लिये १ मील सम्बन्धी ४००० हाथ से गुणा करने पर ४००० × ४००० = १,६००००० अर्थात् एक महायोजन में १ करोड़ ६० लाख हाथ हुए।

वर्तमान में रैखिक माप में १७६० गज का एक मील मानते हैं। यदि एक गज में २ हाथ मानें तो १७६० × २ = ३५२० हाथ का एक मील हुआ। पुनः उपर्युक्त एक महायोजन के हाथ १६००००० से ३५२० हाथ का भाग देने से १६००००० ÷ ३५२० = ४५४५-५/११ मील हुए।

परन्तु इस पुस्तक में स्थूल रूप से व्यवहार में १ कोस में २ मील की प्रसिद्धि के अनुसार सुविधा के लिये सर्वत्र महायोजन के २००० कोस को ८ मील से गुणा कर एक महायोजन के ४००० मील मानकर उसी से ही गुणा किया गया है।

आजकल कुछ लोग ऐसा कह दिया करते हैं कि पता नहीं आचार्यों के समय कोस का प्रमाण क्या था ? और योजन का प्रमाण भी क्या था ?

किन्तु जब परमाणु से लेकर अवसन्नासन्न आदि परिभाषाओं से आगे बढ़ते हुए जघन्य भोगभूमि के बाल के ८ अग्रभागों का एक कर्मभूमि का बालाग्र होता है तब इससे

यह स्पष्ट हो जाता है कि भोगभूमियों के बाल की अपेक्षा चतुर्थकाल के कर्मभूमि के प्रारम्भ का भी बाल मोटा था पुनः आज पंचम काल के मनुष्यों का बाल तो उससे भी मोटा ही होगा। आज के अनुसंधानप्रिय विद्वानों का कर्तव्य है कि आज के बाल की मोटाई के हिसाब से ही आगे के अंगुल, पाद, हाथ आदि बनाकर योजन के हिसाब को समझने की कोशिश करें।

'जम्बूद्वीपपण्णत्ति' की प्रस्तावना के २० पेज पर श्री लक्ष्मीचन्द जैन एम. एस. सी.' ने कुछ स्पष्टीकरण किया है वह पढ़ने योग्य है। देखिये—

"इस योजन की दूरी आजकल के रैखिक माप में क्या होगी ?'

यदि हम २ हाथ = १ गज मानते हैं तो स्थूलरूप से १ योजन ८०००००० गज के बराबर अथवा ४५४५.४५ मील (Miles) के बराबर प्राप्त होता है।

यदि हम १ कोस को आजकल के २ मील के समान मान लें, तो १ योजन ४००० मील (Miles) के बराबर प्राप्त होता है।

कर्मभूमि के बालाग्र का विस्तार आजकल के सूक्ष्म यंत्रों द्वारा किये गये मापों के अनुसार १/५०० इंच से लेकर १/२०० इंच तक होता है। यदि हम इस प्रमाण के अनुसार योजन का माप निकालें तो उपर्युक्त प्राप्त प्रमाणों से अत्यधिक भिन्नता प्राप्त होती है। बालाग्र का प्रमाण १/५०० इंच मानने पर १ योजन ४९६४८.४८ मील प्रमाण आता है। कर्मभूमि का बालाग्र १/३०० इंच मानने से योजन ८२७४७.४७ मील के बराबर पाया जाता है बालाग्र को १/२०० इंच प्रमाण मानने से योजन का प्रमाण और भी बढ़ जाता है।"

इसलिये एक महायोजन में स्थूलरूप में ४००० मील समझना चाहिये किन्तु यह लगभग प्रमाण है। वास्तव में एक महायोजन में इससे अधिक ही मील होंगे ऐसा हमारा अनुमान है। इस प्रकार से तिलोयपण्णत्ति, जम्बूद्वीपपण्णत्ति, त्रिलोकसार, श्लोकवार्तिक आदि ग्रन्थों पर दृढ़ श्रद्धा रखते हुए अपने सम्यक्त्व को सुरक्षित रखना चाहिये। जब तक केवली, श्रुतकेवली के चरणों का सानिध्य प्राप्त न हो तब तक अपने मन को चंचल और अश्रद्धालु नहीं करना चाहिये।

इत्यलं विस्तरेण

परमपूज्य गणिनीप्रमुख आर्यिकाशिरोमणि
श्री ज्ञानमती माताजी का संक्षिप्त-परिचय

–प्रज्ञाश्रमणी आर्यिका चन्दनामती

जन्मस्थान — टिकैतनगर (बाराबंकी) उ.प्र.

जन्मतिथि — आसोज सुदी १५ (शरदपूर्णिमा) वि. सं. १९९१, (२२ अक्टूबर सन् १९३४)

जाति — अग्रवाल दि. जैन, **गोत्र —** गोयल, **नाम —** कु. मैना

माता-पिता — श्रीमती मोहिनी देवी एवं श्री छोटेलाल जैन

आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत — ई. सन् १९५२, बाराबंकी में शरदपूर्णिमा के दिन

क्षुल्लिका दीक्षा — चैत्र कृ. १, ई. सन् १९५३ को महावीरजी अतिशय क्षेत्र (राज.) में आचार्यरत्न श्री देशभूषण जी महाराज से। नाम — क्षुल्लिका वीरमती

आर्यिका दीक्षा — वैशाख कृ. २, ई. सन् १९५६ को माधोराजपुरा (राज.) में चारित्रचक्रवर्ती १०८ आचार्य श्री शांतिसागर जी की परम्परा के प्रथम पट्टाधीश आचार्य श्री वीरसागर जी महाराज के करकमलों से।

साहित्यिक कृतित्व — अष्टसहस्री, समयसार, नियमसार, मूलाचार, कातंत्र-व्याकरण, षट्खण्डागम आदि ग्रंथों के अनुवाद/टीकाएं एवं लगभग ३०० ग्रंथों की लेखिका।

डी.लिट्. की मानद उपाधि — सन् १९९५ में अवध वि.वि. (फैजाबाद) द्वारा एवं तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय मुरादाबाद द्वारा ८ अप्रैल २०१२ को "डी.लिट्." की मानद उपाधि से विभूषित।

तीर्थ निर्माण प्रेरणा — हस्तिनापुर में जंबूद्वीप, तेरहद्वीप, तीनलोक आदि रचनाओं के निर्माण, शाश्वत तीर्थ अयोध्या का विकास एवं जीर्णोद्धार, प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का निर्माण, तीर्थंकर जन्मभूमियों का विकास यथा — भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा-बिहार) में 'नंद्यावर्त महल' नामक तीर्थ निर्माण, भगवान पुष्पदंतनाथ की जन्मभूमि काकन्दी तीर्थ (निकट गोरखपुर-उ.प्र.) का विकास, भगवान पार्श्वनाथ केवलज्ञानभूमि अहिच्छत्र तीर्थ पर तीस चौबीसी मंदिर, हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप स्थल पर भगवान शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की ३१-३१ फुट उत्तुंग खड्गासन प्रतिमा, मांगीतुंगी में निर्माणाधीन १०८ फुट उत्तुंग भगवान ऋषभदेव की विशाल प्रतिमा, महावीर जी तीर्थ पर महावीर धाम में पंचबालयति मंदिर,

शिर्डी में ज्ञानतीर्थ इत्यादि।

महोत्सव प्रेरणा — पंचवर्षीय जम्बूद्वीप महामहोत्सव, भगवान ऋषभदेव अंतर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव, अयोध्या में भगवान ऋषभदेव महाकुंभ मस्तकाभिषेक, कुण्डलपुर महोत्सव, भगवान पार्श्वनाथ जन्मकल्याणक तृतीय सहस्राब्दि महोत्सव, दिल्ली में कल्पद्रुम महामण्डल विधान का ऐतिहासिक आयोजन इत्यादि। **विशेषरूप से २१ दिसम्बर २००८ को जम्बूद्वीप स्थल पर विश्वशांति अहिंसा सम्मेलन का आयोजन हुआ, जिसका उद्घाटन भारत की तत्कालीन राष्ट्रपति श्रीमती प्रतिभा देवीसिंह पाटील द्वारा किया गया।**

शैक्षणिक प्रेरणा — 'जैन गणित और त्रिलोक विज्ञान' पर अंतर्राष्ट्रीय संगोष्ठी, राष्ट्रीय कुलपति सम्मेलन, इतिहासकार सम्मेलन, न्यायाधीश सम्मेलन एवं अन्य अनेक राष्ट्रीय-अंतर्राष्ट्रीय स्तर के सेमिनार आदि।

रथ प्रवर्तन प्रेरणा — जम्बूद्वीप ज्ञानज्योति (१९८२ से १९८५), समवसरण श्रीविहार (१९९८ से २००२), महावीर ज्योति (२००३-२००४) का भारत भ्रमण।

इस प्रकार नित्य नूतन भावनाओं की जननी पूज्य माताजी चिरकाल तक इस वसुधा को सुशोभित करती रहें, यही मंगल कामना है।

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान-संक्षिप्त परिचय

-कर्मयोगी पीठाधीश स्वस्तिश्री रवीन्द्रकीर्ति स्वामीजी

दिगम्बर जैन त्रिलोक शोध संस्थान की स्थापना पूज्य गणिनीप्रमुख श्री ज्ञानमती माताजी की प्रेरणा से सन् 1972 में राजधानी दिल्ली में हुई थी। संस्थान का मुख्य कार्यालय सन् 1974 से हस्तिनापुर में प्रारंभ हुआ। इस संस्थान के अन्तर्गत अनेक गतिविधियाँ हस्तिनापुर में तथा अन्यत्र चल रही हैं-

1. सन् 1972 से वीर ज्ञानोदय ग्रंथमाला के अन्तर्गत लाखों ग्रंथ प्रकाशित हो रहे हैं।

2. सन् 1974 से इस संस्थान के मुखपत्र के रूप में 'सम्यग्ज्ञान' हिन्दी मासिक पत्रिका का निरंतर प्रकाशन हो रहा है।

3. सन् 1974 से 1985 तक हस्तिनापुर में जम्बूद्वीप रचना का निर्माण कार्य हुआ।

4. सन् 1974 से अब तक जम्बूद्वीप रचना के अतिरिक्त अनेक जिनमंदिरों का निर्माण हुआ है- कमल मंदिर, तीन मूर्ति मंदिर, ध्यान मंदिर, शांतिनाथ मंदिर, वासुपूज्य मंदिर, ॐ मंदिर, सहस्रकूट मंदिर, विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर, आदिनाथ मंदिर, अष्टापद मंदिर, ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ, स्वर्णिम तेरहद्वीप रचना, तीन लोक रचना, नवग्रहशांति जिनमंदिर, चौबीस तीर्थंकर मंदिर एवं श्री शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ की 31-31 फुट उत्तुंग प्रतिमाओं की स्थापना ।

5. जम्बूद्वीप पुस्तकालय जिसमें लगभग 15000 ग्रंथ संग्रहीत हैं।

6. णमोकार महामंत्र बैंक जिसमें भक्तों द्वारा लिखकर भेजे गये करोड़ों णमोकार मंत्र जमा किये जाते हैं।

7. समय-समय पर शिक्षण-प्रशिक्षण शिविरों तथा संगोष्ठियों के आयोजन किये जाते हैं।

8. यात्रियों के शुद्ध भोजन के लिए राजा श्रेयांस भोजनालय का संचालन।

9. यात्रियों के ठहरने के लिए आधुनिक सुविधायुक्त डीलक्स फ्लैट्स वाली कई धर्मशालाओं तथा कोठियों एवं बंगलों का निर्माण किया गया है।

10. जम्बूद्वीप परिक्रमा के लिए नौका विहार, ऐरावत हाथी तथा मनोरंजन हेतु मिनी ट्रेन, झूले आदि हैं।

11. ज्ञानमती कला मंदिरम् में हस्तिनापुर के प्राचीन इतिहास से संबंधित झाँकियाँ हैं।

12. तीर्थंकर जन्मभूमियों की वंदना एवं धार्मिक फिल्मों का प्रदर्शन करने वाले थियेटर से समन्वित गणिनी ज्ञानमती हीरक जयंती एक्सप्रेस।

दिल्ली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, हरिद्वार, झाँसी, तिजारा आदि से जम्बूद्वीप स्थल तक आने के लिए दिन भर बसें मिलती रहती हैं।

दि. जैन त्रिलोक शोध संस्थान के अन्तर्गत भगवान महावीर जन्मभूमि कुण्डलपुर (नालंदा) बिहार में भव्य नंद्यावर्त महल तीर्थ तथा प्रयाग-इलाहाबाद (उ.प्र.) में निर्मित तीर्थंकर ऋषभदेव तपस्थली तीर्थ का भी संचालन होता है।

जम्बूद्वीप एवं अन्य रचनाओं के दर्शन हेतु हस्तिनापुर पधारकर आध्यात्मिक एवं भौतिक सुख की प्राप्ति करें।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के शिरोमणि संरक्षक

१. श्रीमती निर्मला जैन ध.प. स्व. श्री प्रेमचन्द्र जैन, तत्पुत्र प्रदीप कुमार जैन, रोशनावली, दिल्ली-६।
२. श्रीमती सुमन जैन ध.प. श्री दिग्विजय सिंह जैन, इंदौर।
३. श्री महावीर प्रसाद जैन संघपति, जी-१९, साऊथ एक्सटेन्शन, नई दिल्ली।
४. श्री महेन्द्र पाल हरेन्द्र कुमार जैन, सूरजमल विहार, दिल्ली।
५. श्रीमती मोहनी जैन ध.प. श्री सुनील जैन, प्रीत विहार, दिल्ली।
६. श्री देवेन्द्र कुमार जैन (धारूहेड़ा वाले) गुड़गाँव (हरि.)।
७. श्रीमती शारदा रानी जैन ध.प. स्व. रिखबचंद जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-९२।
८. डॉ. देवेन्द्र कुमार जैन, भोपाल (म.प्र.)
९. श्रीमती संगीता जैन ध.प. श्री संजीव कुमार जैन, शेरकोट (बिजनौर) उ.प्र.
१०. श्री अनिल कुमार जैन, दरियागंज, दिल्ली
११. श्री बी.डी. मदनाइक, मुम्बई
१२. श्री धनकुमार जैन, बाहुबली एन्क्लेव, दिल्ली-९२।
१३. श्री जितेन्द्र कुमार जैन एवं श्रीमती सुनीता जैन कोटड़िया, फ्लोरिडा, यू.एस.ए.
१४. श्रीमती विमला देवी जैन ध.प. श्री ओमप्रकाश जैन, स्वालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
१५. श्री अमित जैन एवं संभव जैन सुपुत्र श्रीमती अनीता जैन ध.प. श्री मूलचंद जैन पाटनी, दिसपुर (कामरूप) आसाम।
१६. श्रीमती अजित कुमारी जैन ध.प. श्री महेन्द्र कुमार जैन, ओबेदुल्लागंज (रायसेन) म.प्र.।
१७. श्री नाभिकुमार जैन, जैन बुक डिपो, सी-४, पी.वी.आर. प्लाजा के पीछे, कॉमप्लेस, नई दिल्ली।

वीर ज्ञानोदय ग्रन्थमाला के परम संरक्षक

१. श्री माँगीलाल बाबूलाल पहाड़े, हैदराबाद (आन्ध्र प्रदेश)।
२. डॉ. प्रकाशचन्द्र जैन, ७९२ विवेकानंदपुरी, सिविल लाइन, सीतापुर (उ.प्र.)।
३. श्री सुमत प्रकाश जैन, गज्जू कटरा, शाहदरा, दिल्ली।
४. श्री सुनील कुमार जैन, द्वारा-सुनील टैक्सटाईल्स, सरधना (मेरठ) उ.प्र.।
५. स्व. श्री प्रकाश चंद अमोलक चंद जैन सर्राफ, सनावद (म.प्र.)।
६. श्री प्रद्युम्न कुमार जवेरी, रोकड़ियालेन, बोरीवली (वेस्ट) मुंबई।
७. श्रीमती उर्मिला देवी ध.प. श्री कान्ती प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
८. श्रीमती उषा जैन ध.प. श्री विमल प्रसाद जैन, ऋषभ विहार, दिल्ली।
९. श्री आनन्द प्रकाश जैन (सौरम वाले) , गांधीनगर, दिल्ली।
१०. श्रीमती सरिता जैन ध.प. श्री राजकुमार जैन, किदवई नगर, कानपुर।
११. स्व. श्रीमती कैलाशवती ध.प. श्री कैलाश चन्द्र जैन , तोपखाना बाजार, मेरठ।
१२. श्री भानेन्द्र कुमार जैन, द्वारा-श्री विद्या जैन, भगत सिंह मार्ग, जयपुर।
१३. श्री प्रदीप कुमार शान्तिलाल बिलाला, अनूपनगर, इंदौर, (म.प्र.)।
१४. श्री सुरेशचंद पवन कुमार जैन, बाराबंकी (उ.प्र.)।
१५. श्री नथमल पारसमल जैन, कलकत्ता-७।
१६. श्रीमती स्व. शांताबाई ध.प. श्री कमलचंद जैन, सनावद (म.प्र.)।
१७. श्री रूपचंद जैन कटारिया, दिल्ली
१८. श्री आशु जैन, कालका जी, नई दिल्ली
१९. श्री प्रद्युम्न कुमार जैन छोटी सा., श्री अमरचंद जैन सर्राफ, लखनऊ (उ.प्र.)
२०. श्रीमती शशि जैन ध.प. श्री दिनेशचंद जैन, शिवालिक नगर, हरिद्वार (उत्तराखंड)।
२१. श्रीमती आदर्श जैन ध.प. स्व. श्री अनन्तवीर्य जैन के सुपुत्र श्री मनोज कुमारजैन, मेरठ।
२२. श्रीमती आरती जैन ध.प. श्री प्रकाशचंद जैन 'शीशे वाले', इलाहाबाद (उ.प्र.)।

विषय-दर्पण

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ सं.
	जंबूद्वीप—जंबूद्वीप का प्रमाण, परिधि, जगती, वेदिका, जंबूद्वीप के प्रमुख द्वार, विजय आदि देवों के नगर, वनखंड वेदिका।	१
	जंबूद्वीप का सामान्य वर्णन—सात क्षेत्र-छह पर्वतों के नाम, छह सरोवर-चौदह नदियों के नाम, सुमेरुपर्वत, तीन सौ ग्यारह पर्वत, संपूर्ण नदियाँ, कर्मभूमि, भोगभूमि, जंबू-शाल्मलिवृक्ष, आर्यखंड, म्लेच्छ खण्ड और कूटों का वर्णन।	२
	जंबूद्वीप का विशेष वर्णन	
	छह कुलाचल—हिमवान् आदि पर्वतों का प्रमाण, उनके वर्ण। इन कुल पर्वतों के ऊपर स्थित कूटों की संख्या और उनका प्रमाण, उन पर रहने वाले देव-देवियों के नाम।	३
	छह सरोवर—पद्म सरोवर, श्रीदेवी का भवन और उसके परिवार कमल, महापद्म सरोवर, ह्री देवी का भवन और उसके परिवार कमल, केसरी सरोवर, कीर्तिदेवी का भवन और परिवार कमल, महापुंडरीक सरोवर, बुद्धि देवी का भवन और परिवार कमल, पुंडरीक सरोवर, लक्ष्मी देवी का भवन और परिवार कमल। सबके जिनमन्दिर।	६
	भरतक्षेत्र—विजयार्ध पर्वत, उसकी श्रेणियाँ, उस पर स्थित कूट, गुफायें, गंगा-सिंधु नदी, गंगाकुंड, भरतक्षेत्र के छह खण्ड, वृषभाचल पर्वत, आर्य-म्लेच्छ खण्ड व्यवस्था।	८
	हैमवत क्षेत्र—रोहित् रोहितास्या नदी, रोहित् कुंड, नाभिगिरि।	१३
	हरि क्षेत्र—हरित् हरिकांता नदी, नाभिगिरि।	१६
	विदेह क्षेत्र—सीता-सीतोदा नदी, सुमेरु पर्वत, सुमेरु पर्वत के घटने का क्रम, मेरु पर्वत की परिधियाँ, पर्वत का वर्ण, भद्रसालवन, नंदनवन, सौमनसवन, पांडुकवन, पांडुक आदि शिलायें, विदेह क्षेत्र का विस्तार, गजदंत पर्वतों के नाम, उन पर स्थित कूट और उनके नाम, बत्तीस विदेह, सोलह वक्षार, बारह विभंगा नदियाँ, देवारण्य वन, विदेह के बत्तीस देशों के नाम, एक-एक देश के छह-छह खण्ड, वहाँ की गंगा सिंधु नदियाँ, रक्ता रक्तोदा नदियाँ, यमकगिरि, सीता-सीतोदा नदी के बीस सरोवर, कांचनगिरि,	१६

क्र.सं.	विषय	पृष्ठ सं.
	दिग्गज पर्वत, देवकुरु-उत्तरकुरु भोगभूमि, जंबूवृक्ष, उसकी शाखा पर स्थित जिनमंदिर, शाल्मली वृक्ष।	
	रम्यकक्षेत्र—नारी, नरकांता नदी।	३१
	हैरण्यवत क्षेत्र—सुवर्णकूला-रूप्यकूला नदी।	३१
	ऐरावत क्षेत्र—रक्ता-रक्तोदा नदी। विजयार्ध पर्वत, उसके कूटों के नाम, छह खण्ड व्यवस्था।	३१
	जम्बूद्वीप का संक्षिप्त अवलोकन	
	तीन सौ ग्यारह पर्वत कहाँ-कहाँ हैं ? जंबूद्वीप की संपूर्ण नदियाँ कितनी हैं ? चौंतीस कर्मभूमि कहाँ हैं ? छह भोगभूमि कहाँ हैं ? जंबूवृक्ष-शाल्मली वृक्ष कहाँ हैं ? चौंतीस आर्यखण्ड कहाँ हैं ? पाँच सौ सत्तर म्लेच्छ खण्ड कहाँ हैं ? वेदी और वनखण्ड, जंबूद्वीप के अठत्तर जिनचैत्यालय। इस जम्बूद्वीप में हम कहाँ हैं ?	३२
	षट्काल परिवर्तन	३५
	लवण समुद्र का वर्णन—समुद्र के मध्य में पाताल, ४ उत्कृष्ट पाताल, ४ मध्य पाताल, १००० जघन्य पाताल, नागकुमार देवों के १,४२,००० नगर, उत्कृष्ट पाताल के आस पास के ८ पर्वत, ८ सूर्य द्वीप हैं, समुद्र में गौतम द्वीप का वर्णन, मागधद्वीप आदि का वर्णन, ४८ कुमानुषद्वीप, कुभोगभूमि में जन्म लेने के कारण।	३८
	भू-भ्रमण खण्डन	४५
	हस्तिनापुर में निर्मित जम्बूद्वीप रचना	४८
	चार्ट।	५६

श्री जंबूद्वीप स्तुति

स्वयंभूत जिनगेह अकृत्रिम जंबूद्वीप मध्य शोभे।
वंदूं अट्ठत्तर जिनमंदिर मनविशुद्धि हेतू मुद से।।१।।
मेरु सुदर्शनगिरि को मस्तक नत हो करके प्रणमन कर।
उस पर स्थित षोडश जिनगृह, सब गृह में प्रतिमा मनहर।।२।।
उन सब जिनगृह, जिनप्रतिमा को त्रयशुद्धि से वंदूं मैं।
भक्तिभाव से नितप्रति प्रणमूं शिवसुखसिद्धि हेतु मैं।।३।।
विदिशाओं में गजदंताचल चार कहे हैं सुन्दरतम।
उनमें त्रिभुवनपति जिनवर के मंदिर शोभें अति उत्तम।।४।।
उन मंदिर में आप्तप्रभु की प्रतिमायें शाश्वत शोभें।
नमोस्तु उन सबको नित मेरा स्वात्मजन्य सुख मम होवे।।५।।
षट् कुलपर्वत पर चैत्यालय रत्नमयी शोभें शाश्वत।
उन गृह में प्रतिमाएँ इक सौ आठ प्रमाण सभी में नित।।६।।
अकृत्रिम जिनबिंब मनोहर उनको मुद से नमूं सदा।
शिवसुख विभव प्राप्ति के हेतू षट् जिनमंदिर नमूं सदा।।७।।
पूर्व और पश्चिम विदेह के, शुभ वक्षारगिरी षोडश।
उन पर षोडश जिनमंदिर हैं, अकृत्रिम रत्नों के शुभ।।८।।
उनमें राजित जिनवरप्रतिमा, को वंदूं त्रयकाल मुदा।
भवभय अग्नि शांत करने को शिर नत हो मैं नमूं सदा।।९।।
पूर्वापर बत्तिस विदेह में बत्तिस रजताचल पर्वत।
उन पर बत्तिस जिनचैत्यालय अकृत्रिम शोभे संतत।।१०।।
उनमें राजित जिनवरप्रतिमा, भक्तिभाव से वंदूं मैं।
भवसंताप नाश मम होवे त्रिकरण शुचि से अर्चूं मैं।।११।।
भरतक्षेत्र अरु ऐरावत में दो विजयारध पर्वत हैं।
उन पर जिनमंदिर दो राजें भावभक्ति से वंदूँ मैं।।१२।।
उन मंदिर में जिनवरप्रतिमा, वंदन करूं सदा शुचि से।
मन प्रसन्न के हेतु नमूं मैं, भवदुःख नाश करूं झट से।।१३।।
जंबू शाल्मलि दो वृक्षों पर दो जिनचैत्यालय शाश्वत।
उनमें जिनवर की प्रतिमायें रत्नमयी शोभें नितप्रति।।१४।।

भवदुःख अंतक जिनवर के प्रतिबिंब उन्हें मैं नमूं सदा।
भवदुःख शांति हेतु भक्ति से सतत संस्तवन करूं मुदा।।१५।।
मेरु सुदर्शन के षोडश जिनगृह गजदंतगिरी के चार।
कुलगिरि के षट् कहे विदेहक्षेत्र के षोडशगिरि वक्षार।।१६।।
रजताचल के चौंतिस जिनगृह जंबू शाल्मलि के दो जान।
ये सब अठहत्तर चैत्यालय उनको नमूं सदा सुखदान।।१७।।
मुनिगणवंदित पादसरोरुह सुरपति नाग नरेन्द्र नुतं।
त्रिभुवन जिनगृह शाश्वत जितने मनःशुद्धि हेतू प्रणमन।।१८।।
मंगलद्रव्य विविध तोरण घटधूप कुंभमंगल शोभें।
मणिमाला से अनुपम जिनगृह मनःशुद्धिकृत प्रणमूं मैं।।१९।।
धातकि-पुष्करार्ध द्वीपों में, इष्वाकारगिरी ऊपर।
मनुजोत्तरनग पर जिनगृह हैं नंदीश्वरवर द्वीप रुचिर।।२०।।
रुचकगिरी कुंडल पर्वत पर जितने जिनमंदिर राजें।
उन मंदिर के जिनबिम्बों को वंदूं पाप तिमिर भाजे।।२१।।
त्रिभुवन में जो भवनवासि व्यंतर ज्योतिषगृह स्वर्गों में।
श्रीजिनवरगृह शोभित होते उसमें प्रतिमा अगणित हैं।।२२।।
ये सब त्रिभुवनपूज्य जिनालय साधुगणों से वंदित हैं।
वंदूँ सबको सदा मुझे वे, जिनगुणसम्पत्ति देवें।।२३।।
नमोस्तु जिनप्रतिमा को मेरा सकल ताप विच्छेद करो।
नमोस्तु जिनप्रतिमा को मेरा सकल दोष से शुद्ध करो।।२४।।
नमोस्तु जिनप्रतिमा को मेरा सकल सौख्य संसिद्धि करो।
हे जिनदेव! पवित्र करो मम भव से रक्षा झटिति करो।।२५।।
नमोस्तु अकृत्रिम जिनमंदिर, तीनलोक संपत्भर्ता।
नमोस्तु परमात्मन्! परमेष्ठिन्! सकललोक चूड़ामणिनाथ।।२६।।
नमोस्तु जिनप्रतिमा को मेरा सकल क्लेश विच्छेद करो।
रागमोहयुत मम अज्ञानवान् मन झटिति पवित्र करो।।२७।।
जंबूद्वीपजिनालय संस्तुति भक्ती से मैं करूं मुदा।
अर्हत् ज्ञानवती श्री मुझको होवे झटिति कर्मभिदा।।२८।।

जम्बूद्वीप

णमो अरहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं।
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं।।

अनादिसिद्ध अनंतानंत आकाश के मध्य में चौदह राजू ऊँचा, सर्वत्र सात राजू मोटा, तलभाग में पूर्व पश्चिम सात राजू चौड़ा, घटते हुए मध्य में एक राजू चौड़ा, पुनः बढ़ते हुए ब्रह्म स्वर्ग तक पांच राजू चौड़ा और आगे घटते-घटते सिद्धलोक के पास एक राजू चौड़ा ऐसा पुरुषाकार लोकाकाश है।

इसमें मध्यलोक एक राजू चौड़ा और एक लाख चालीस योजन ऊँचा है।

जम्बूद्वीप का विस्तार—मध्यलोक में असंख्यात द्वीप-समूहों से वेष्टित गोल तथा जंबूवृक्ष से युक्त जंबूद्वीप स्थित है। यह एक लाख योजन विस्तार वाला है।

जंबूद्वीप की परिधि—तीन लाख सोलह हजार दो सौ सत्ताइस योजन, तीन कोश, एक सौ अट्ठाइस धनुष और कुछ अधिक साढ़े तेरह अंगुल है अर्थात् योजन ३,१६,२२७ योजन ३ कोश १२८ धनुष १३-(१/२) अंगुल है। लगभग १२६४९०८००६ मील।

जम्बूद्वीप का क्षेत्रफल—सात सौ नब्बे करोड़, छप्पन लाख, चौरानवे हजार, एक सौ पचास ७९०,५६,९४,१५० योजन है अर्थात् तीन नील, सोलह खबर, बाईस अरब, सतहत्तर करोड़, छ्यासठ लाख (३,१६,२२,७७,६६,००,०००) मील है।

जम्बूद्वीप की जगती-आठ योजन (३२०००मील) ऊँची, मूल में बारह (४८००० मील), मध्य में आठ (३२००० मील) और ऊपर में चार महायोजन (१६०००) मील विस्तार वाली है। जंबूद्वीप के परकोटे को जगती कहते हैं। यह जगती मूल में वज्रमय, मध्य में सर्वरत्नमय और शिखर पर वैडूर्यमणि से निर्मित है, इस जगती के मूल प्रदेश में पूर्व-पश्चिम की ओर सात-सात गुफायें हैं, तोरणों से रमणीय, अनादिनिधन ये गुफायें

महानदियों के लिए प्रवेश द्वार हैं।

वेदिका—जगती के उपरिम भाग पर ठीक बीच में दिव्य सुवर्णमय वेदिका है। यह दो कोश ऊँची और पांच सौ धनुष चौड़ी है अर्थात् ऊँचाई २ कोश और चौड़ाई ५०० धनुष है।

जगती के उपरिम विस्तार चार योजन में वेदी के विस्तार को घटाकर शेष को आधा करने पर वेदी के एक पार्श्व भाग में जगती का विस्तार है यथा $\frac{३२०००-५००}{२}$=१५७५० धनुष।

विशेष—दो हजार धनुष का एक कोश और चार कोश का एक योजन होने से चार योजन में ३२००० धनुष होते हैं अतः ३२००० धनुष में ५०० धनुष घटाया है।

वेदी के दोनों पार्श्व भागों में उत्तम वापियों से संयुक्त वन खंड हैं। वेदी के अभ्यंतर भाग में महोरग जाति के व्यंतर देवों के नगर हैं। इन व्यंतर नगरों के भवनों में अकृत्रिम जिनमंदिर शोभित हैं।

जंबूद्वीप के प्रमुख द्वार—चारों दिशाओं में क्रम से विजय, वैजयंत, जयंत और अपराजित ये चार गोपुरद्वार हैं। ये आठ महायोजन (३२००० मील) ऊँचे और चार योजन (१६००० मील) विस्तृत हैं। सब गोपुर द्वारों में सिंहासन, तीन छत्र, भामंडल और चामर आदि से युक्त जिनप्रतिमायें स्थित हैं। ये द्वार अपने-अपने नाम के व्यंतर देवों से रक्षित हैं।। प्रत्येक द्वार के उपरिम भाग में सत्रह खन (तलों) से युक्त, उत्तम द्वार हैं।

विजय आदि देवों के नगर—द्वार के ऊपर आकाश में बारह हजार योजन लम्बा, छह हजार योजन विस्तृत विजयदेव का नगर है। ऐसे ही वैजयंत आदि के नगर हैं। इनमें अनेकों देवभवनों में जिनमंदिर शोभित हैं। विजय आदि देव अपने-अपने नगरों में देवियों और परिवार देवों से युक्त निवास करते हैं।

वनखंड वेदिका—जगती के अभ्यंतर भाग में पृथ्वीतल पर दो कोस विस्तृत आम्रवृक्षों से युक्त वनखंड हैं। सुवर्ण रत्नों से निर्मित उस उद्यान की वेदिका दो कोस ऊंची, पांच सौ धनुष चौड़ी है।

जंबूद्वीप का सामान्य वर्णन

जंबूद्वीप के भीतर दक्षिण की ओर भरत क्षेत्र है। उसके आगे हैमवत,हरि, विदेह, रम्यक, हैरण्यवत और ऐरावत ये सात क्षेत्र हैं। हिमवान, महाहिमवान्, निषध, नील, रुक्मि और शिखरी ये छह पर्वत हैं।

दक्षिण में भरतक्षेत्र का विस्तार ५२६$\frac{६}{१९}$ योजन है। भरतक्षेत्र से दूना हिमवान

पर्वत है, उससे दूना हैमवत क्षेत्र हैं। ऐसे विदेहक्षेत्र तक दूना-दूना विस्तार आगे आधा-आधा है।

भरतक्षेत्र के मध्य में पूर्व-पश्चिम लंबा समुद्र को स्पर्श करता हुआ विजयार्ध पर्वत है।

हिमवान आदि छह कुलाचलों पर क्रम से पद्म, महापद्म, तिगिंछ, केशरी, पुंडरीक और महापुंडरीक ऐसे छह सरोवर हैं।

इन छह सरोवरों से गंगा-सिंधु, रोहित-रोहितास्या, हरित-हरिकांता, सीता-सीतोदा, नारी-नरकांता, सुवर्णकूला-रूप्यकूला और रक्ता-रक्तोदा ये चौदह नदियां निकलती हैं जो कि एक-एक क्षेत्र में दो-दो नदी बहती हुई सात क्षेत्रों में बहती हैं।

विदेहक्षेत्र के बीचोंबीच में सुमेरु पर्वत

भरतक्षेत्र के छह खंड—हिमवान पर्वत के पद्मसरोवर से गंगा-सिंधु नदियां निकलकर नीचे कुंड में गिरकर विजयार्ध पर्वत की गुफाओं में प्रवेश करके दक्षिण भरत में आ जाती हैं और पूर्व-पश्चिम समुद्र में प्रवेश कर जाती हैं इसलिये भरतक्षेत्र के छह खंड हो जाते हैं।

इस प्रकार से जंबूद्वीप की यह सामान्य व्यवस्था है। इस जंबूद्वीप में तीन सौ ग्यारह पर्वत हैं जिनमें एक मेरु, छह कुलाचल, चार गजदंत, सोलह वक्षार, चौंतीस विजयार्ध, चौंतीस वृषभाचल, चार नाभिगिरि, चार यमकगिरि, आठ दिग्गजेंद्र और दो सौ कांचनगिरि हैं। यथा—

१+६+४+१६+३४+३४+४+४+८+२००=३११

सत्रह लाख बानवे हजार नब्बे नदियां हैं। चौंतीस कर्मभूमि, छह भोगभूमि, जम्बू-शाल्मलि ऐसे दो वृक्ष, चौंतीस आर्यखण्ड, एक सौ सत्तर म्लेच्छ खंड और पांच सौ अड़सठ कूट हैं। ये सब कहाँ-कहाँ हैं ? इन सभी को इस पुस्तक में बताया गया है।

जंबूद्वीप का विशेष वर्णन

छह कुलाचल

हिमवान—हिमवानपर्वत भरतक्षेत्र की तरफ १४४७१-५/१९ योजन (५७८८५०५२-१२/१९ मील) लम्बा है और हैमवत क्षेत्र की तरफ २४९३२-१/१९ योजन (९९७२८२१०-१०/१९ मील) लम्बा है। इसकी चौड़ाई १०५२-१२/१९ योजन (४२०८४२१(१/१९मील) प्रमाण है। ऊंचाई १०० योजन (४००००० मील) प्रमाण है।

महाहिमवान—यह पर्वत ४२१०-१०/१९ योजन (१६८४२१०५-५/१९ मील) विस्तार वाला है। हैमवत की तरफ इसकी लंबाई ३७६७४-१६/१९ योजन

(१५०६९९३६८-८/१९ मील) है और हरिक्षेत्र की तरफ इसकी लंबाई ५३९३१-६/१९ योजन (२१५७२५२६३-३/१९ मील) है। यह पर्वत २०० योजन (८००००० मील) ऊँचा है।

निषध—यह पर्वत १६८४२-२/१९ योजन (६७३६८०००-१/१९ मील) विस्तृत है। इसकी हरिक्षेत्र की तरफ लंबाई ७३९०१-१७/१९ योजन (२९५६०४३५७-१७/१९ मील) एवं विदेह की तरफ की लंबाई ९४१५६-२/१९ योजन (३७६६२४४२१-१/१९ मील) है। इसकी ऊंचाई ४०० योजन (१६०००००मील) है।

आगे का **नील पर्वत** निषध के प्रमाण वाला है, **रूक्मी पर्वत** महाहिमवान सदृश है और **शिखरी पर्वत** हिमवान के प्रमाण वाला है।

पर्वतों के वर्ण—हिमवान् पर्वत का वर्ण सुवर्णमय है आगे क्रम से चांदी, तपाये

हुये सुवर्ण, वैडूर्यमणि, चांदी और सुवर्ण सदृश है।

ये पर्वत ऊपर और मूल में समान विस्तार वाले हैं एवं इनके पार्श्वभाग चित्र-विचित्र मणियों से निर्मित हैं।

छह पर्वतों के कूट

हिमवान के ११ कूट—सिद्धायतन, हिमवत, भरत, इला, गंगा, श्रीकूट, रोहितास्या, सिंधु, सुरा देवी, हैमवत और वैश्रवण ये ११ कूट हैं। प्रथम सिद्धायतन कूट पूर्व दिशा में है उस पर जिनमंदिर है। बाकी १० कूटों में से स्त्रीलिंग नामवाची कूटों पर व्यंतर देवियां एवं अवशेष कूटों पर व्यंतरदेव रहते हैं। सभी कूट पर्वत की ऊँचाई के प्रमाण से चौथाई प्रमाण वाले होते हैं। जैसे हिमवान पर्वत १०० योजन(४००००० मील) ऊँचा है तो इसके सभी कूट २५-२५ योजन ऊँचे हैं। मूल में २५ योजन (१००००० मील) विस्तृत, मध्य में १८-३/४ योजन(७५००० मील) और ऊपर १२-१/२ योजन (५०००० मील) विस्तार है। इनके ऊपर देवों व देवियों के भवन बने हुए हैं।

महाहिमवान के आठ कूट—सिद्धकूट,महाहिमवत्, हैमवत, रोहित, ह्रीकूट, हरिकांता, हरिवर्ष और वैडूर्य ये आठ कूट हैं। ये ५० योजन (२००००० मील) ऊंचे, मूल में ५० योजन, ऊपर में २५ योजन (१००००० मील) विस्तृत हैं।

निषध के ९ कूट—सिद्धकूट, निषध, हरिवर्ष, पूर्वविदेह, हरित्, धृति, सीतोदा, अपरविदेह और रुचक ये ९ कूट हैं। ये १०० योजन (४००००० मील) ऊंचे, मूल में १०० योजन विस्तृत, मध्य में ७५ योजन (३००००० मील) और ऊपर में ५० योजन (२००००० मील) विस्तृत हैं।

नील के ९ कूट—सिद्ध, नील,पूर्वविदेह, सीता, कीर्ति, नरकांता, अपरविदेह, रम्यक और अपदर्शन ये ९ कूट हैं। ये कूट भी १०० योजन ऊंचे हैं, मूल में १०० योजन विस्तृत और ऊपर में ५० योजन विस्तृत हैं अर्थात् क्रम से ४००००० मील ऊंचे, मूल में इतने ही चौड़े तथा मध्य में ३००००० मील और ऊपर में २०००००मील चौड़े हैं।

रुक्मि के ८ कूट—सिद्ध, रुक्मि, रम्यक, नारी, बुद्धि, रुप्यकूला, हैरण्यवत और मणिकाँचन ये ८ कूट हैं। ये ५० योजन ऊंचे, ५० योजन विस्तृत और ऊपर में २५ योजन विस्तृत हैं अर्थात् २००००० मील ऊंचे, चौड़े, मध्य में १५०००० मील, ऊपर में १००००० मील विस्तृत हैं।

शिखरी के ११ कूट—सिद्ध, शिखरी, हैरण्यवत, रसदेवी, रक्ता, लक्ष्मी, सुवर्ण, रक्तवती, गंधवती, ऐरावत और मणिकांचन ये ११ कूट हैं। ये २५ योजन (१००००० मील) ऊँचे, २५ योजन विस्तृत, मध्य में १८-३/४ योजन (७५००० मील) और ऊपर

में १२-१/२ योजन (५०००० मील) विस्तृत हैं।

विशेष—सभी कूटों में पूर्व दिशा के सिद्धकूट में जिनभवन हैं। स्त्रीलिंगवाची कूटों में व्यन्तर देवियाँ हैं और शेष में व्यंतर देवों के भवन बने हुए हैं।

वनखंड—सभी पर्वतों के नीचे(तलहटी में) और ऊपर दोनों तरफ वनखंड हैं और इनके कूटों के नीचे चारों तरफ वनखंड दो कोश चौड़े हैं एवं पर्वत पर्यंत लम्बे हैं। इन वनखंडों की वेदिका पांच सौ धनुष चौड़ी, दो कोस ऊँची हैं। ये वेदिकायें और वनखंड सभी पर्वत, नदी, सरोवर आदि में सर्वत्र सदृश मध्य प्रमाण वाले हैं।

छह सरोवर

१.पद्म सरोवर—यह सरोवर हिमवान् पर्वत के मध्य भाग में है। ५०० योजन चौड़ा, इससे दुगुना १००० योजन लम्बा और १० योजन गहरा है। इसके मध्य भाग में एक योजन का एक कमल है। इसके एक हजार ग्यारह पत्र हैं। इसकी नाल बयालीस कोस ऊंची, एक कोश मोटी है। यह वैडूर्यमणि की है। इसका मृणाल तीन कोश मोटा रूप्यमय—श्वेतवर्ण का है। इसका नाल ४२ कोश अर्थात् १०-१/२ योजन प्रमाण है अतः दस योजन नाल तो जल में है और दो कोश जल के ऊपर है। कमल की कर्णिका दो कोश ऊँची और एक कोश चौड़ी है। इस कर्णिका के ऊपर श्रीदेवी का भवन बना हुआ है। यह भवन एक कोश लंबा, अर्द्ध कोश चौड़ा और पौन कोश ऊँचा है। इसमें श्रीदेवी निवास करती है। इसकी आयु एक पल्य प्रमाण है।

श्रीदेवी के परिवार कमल—एक लाख चालीस हजार एक सौ पंद्रह (१,४०,११५) परिवार कमल हैं वे इसी सरोवर में हैं। इन परिवार कमलों की नाल दस योजन प्रमाण है अर्थात् इनकी नाल जल से दो कोश ऊपर नहीं है जल के बराबर है। इन कमलों का विस्तार आदि मुख्य कमल से आधा-आधा है। इनमें रहने वाले परिवार देवों के भवनों का प्रमाण भी श्रीदेवी के भवन के प्रमाण से आधा है।

२. महापद्म सरोवर—यह सरोवर महाहिमवान् पर्वत पर है। यह १००० योजन चौड़ा, २००० योजन लंबा और २० योजन गहरा है। इसके मध्य में जो मुख्य कमल है वह दो योजन विस्तृत है। इसकी कर्णिका दो कोस की है और इसमें ह्रीदेवी का भवन है। वह दो कोश लंबा, डेढ़ कोश ऊँचा और एक कोश चौड़ा है। इस देवी के परिवार कमल २,८०,२०३ हैं। इन परिवार कमलों का एवं इनके भवनों का प्रमाण मुख्य कमल से आधा-आधा है। इसके मुख्य कमल पर ह्रीदेवी निवास करती है। इसकी आयु भी एक पल्य प्रमाण है।

पद्म द्रह

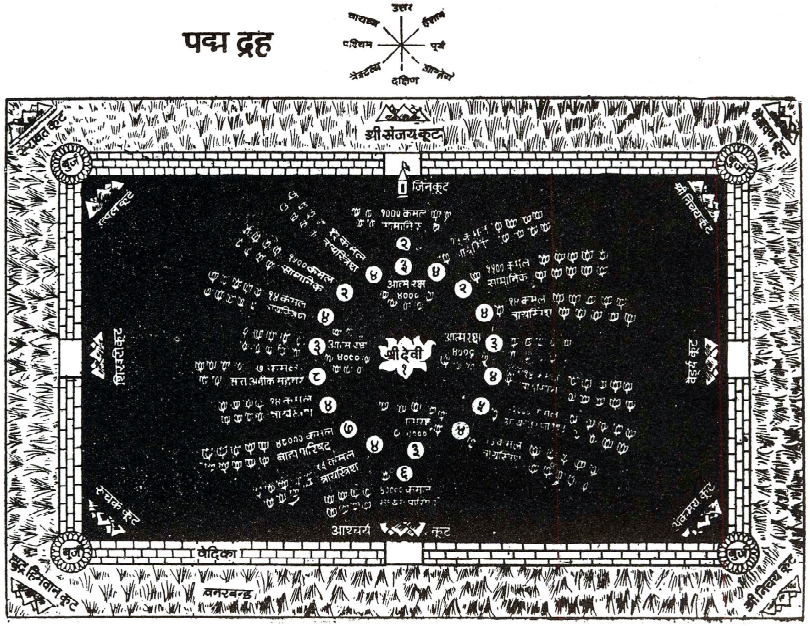

३.तिगिंछ सरोवर—यह सरोवर निषध पर्वत के मध्य में है। यह २००० यो. चौड़ा, ४००० योजन लंबा एवं ४० यो. गहरा है। इस सरोवर में जो मुख्य कमल है वह चार योजन विस्तृत है। इसकी कर्णिका चार कोश की है उसमें बना हुआ धृति देवी का भवन चार कोश लंबा, २ कोश चौड़ा और ३ कोश ऊँचा है। इसके परिवार कमल ५,६०,४६० हैं। इन कमलों का प्रमाण तथा इनके भवनों का विस्तार आदि मुख्य कमल से आधा-आधा है। इसके मुख्य कमल में 'धृतिदेवी' रहती है, इसकी आयु भी एक पल्य की है।

पद्म सरोवर का क्षेत्रफल आदि—५०० यो. चौड़ा, १००० यो. गहरा है। इसका क्षेत्रफल—५००×१०००=५००००० यो. है। घनफल ५००००००×१०=५००००००० योजन है। क्षेत्रफल की मील बनाने से ५००००००×४०००=२,००,००,००,०००(दो अरब) मील पद्म सरोवर का क्षेत्रफल है।

इनमें मुख्य कमल एक योजन का अर्थात् २००० कोश (४०००मील) का है। शेष इसके आधे-आधे प्रमाण के हैं। ये कमल १,४०,११५ हैं। मुख्य कमल की नाल १०-१/२ यो. है अतः जल से दो कोश ऊपर है दस योजन जल में डूबी है। परिवार कमलों की नाल जल प्रमाण ही है, ऊपर निकली हुई नहीं है।

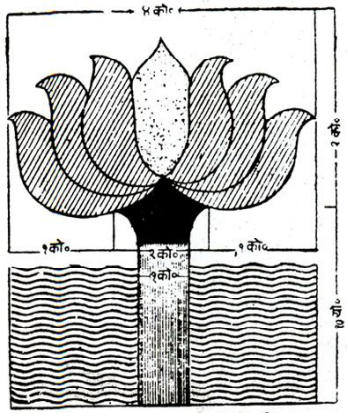

महापद्म सरोवर का क्षेत्र आदि—१०००×२०००=२०,००,०००(बीस लाख) यो. क्षेत्रफल है। २०,००,०००×४०००=८,००,००,००,००० (आठ अरब मील) है, इसमें मुख्य कमल दो योजन का, ८००० मील का है। शेष इससे आधे प्रमाण के हैं। ये कमल २,८०,२३० हैं।

तिगिंछ सरोवर का विशेष विस्तार—२०००×४०००=८०,००००० योजन है। इसके मील ८०००००००×४०००=३२,००,००,००,००० (बत्तीस अरब) होते हैं।

इसमें मुख्य कमल चार योजन का है अर्थात् ४×४०००=१६००० मील का है। शेष इससे आधे-आधे प्रमाण के हैं। वे कमल ५,६०,४६० हैं।

४. केसरी सरोवर—इस सरोवर का सारा वर्णन तिगिंछ के सदृश है। अन्तर इतना ही है कि यहाँ 'बुद्धि' नाम की देवी निवास करती है।

५. पुंडरीक सरोवर—इस सरोवर का सारा वर्णन 'महापद्म' के सदृश है। अन्तर इतना ही है कि इसके कमल पर 'कीर्तिदेवी' निवास करती है।

६. महापुंडरीक—इस सरोवर का सारा वर्णन पद्म सरोवर के सदृश है। यहाँ 'लक्ष्मी' नाम की देवी रहती है।

विशेष—सरोवरों के चारों ओर वेदिका से वेष्टित वनखण्ड हैं। वे अर्धयोजन चौड़े हैं। सरोवरों के कमल पृथ्वीकायिक हैं, वनस्पतिकायिक नहीं हैं। इनमें बहुत ही उत्तम सुगंधि आती है।

जिनमंदिर—इन सरोवरों में जितने कमल कहे हैं वे महाकमल हैं। इनके अतिरिक्त क्षुद्रकमलों की संख्या बहुत है। इन सब कमलों के भवनों में एक-एक जिनमंदिर है इसलिये जितने कमल हैं उतने ही जिनमंदिर हैं।

भरतक्षेत्र

विजयार्ध पर्वत

भरतक्षेत्र के बीच में पूर्व-पश्चिम लंबा विजयार्ध पर्वत है। दक्षिण की तरफ इसकी लम्बाई ९७४८-११/१९ योजन (३८९९४३१५-१५/१९) मील है। उत्तर भरत की तरफ

इस पर्वत की लंबाई १०७२०-११/१९ योजन (४२८८२३१५-१५/१९ मील) है। यह पर्वत ५० योजन (२००००० मील) चौड़ा और २५ योजन (१००००० मील) ऊंचा है। उसकी नींव सवा छह योजन है। इस पर्वत के दक्षिण-उत्तर दोनों तरफ पृथ्वीतल से १० योजन (४,०००० मील) ऊपर जाकर दस योजन विस्तीर्ण उत्तम श्रेणी हैं। उनमें दक्षिण श्रेणी में पचास और उत्तर श्रेणी में साठ ऐसी विद्याधरों की ११० नगरियां हैं। उसके ऊपर दोनों तरफ दस योजन जाकर दस योजन विस्तीर्ण श्रेणियां हैं। इनमें आभियोग्य जाति के देवों के नगर हैं। इन आभियोग्यपुरों से पांच योजन (२०,००० मील) ऊपर जाकर दस योजन (४०,००० मील) विस्तीर्ण विजयार्ध पर्वत का उत्तम शिखर है।

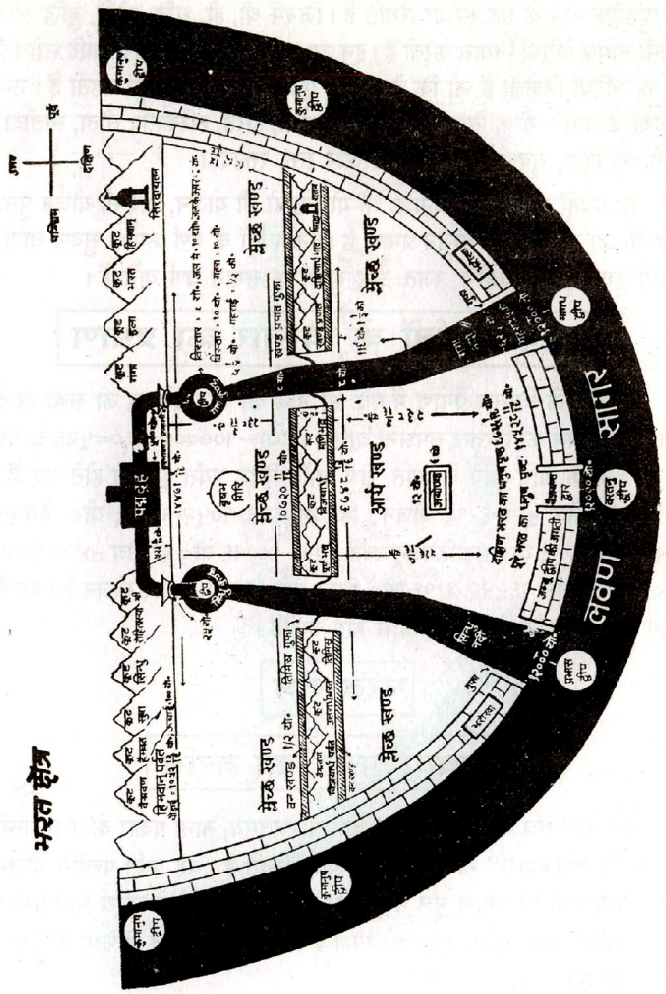

उस समभूमि भाग में सुवर्ण मणियों से निर्मित दिव्य नौ कूट हैं। उन कूटों में पूर्व की ओर से सिद्धकूट, भरतकूट, खंडप्रपात, मणिभद्र, विजयार्धकुमार, पूर्णभद्र, तिमिश्रगुहकूट, भरतकूट और वैश्रवण ऐसे नौ कूट हैं। ये सब ६-१/४ योजन(२५००० मील) ऊंचे,मूल में इतने ही चौड़े और ऊपर भाग में कुछ अधिक तीन योजन(१२००० मील) चौड़े हैं। सिद्धकूट में जिनभवन एवं शेष कूटों के भवनों में देव-देवियों के निवास हैं।

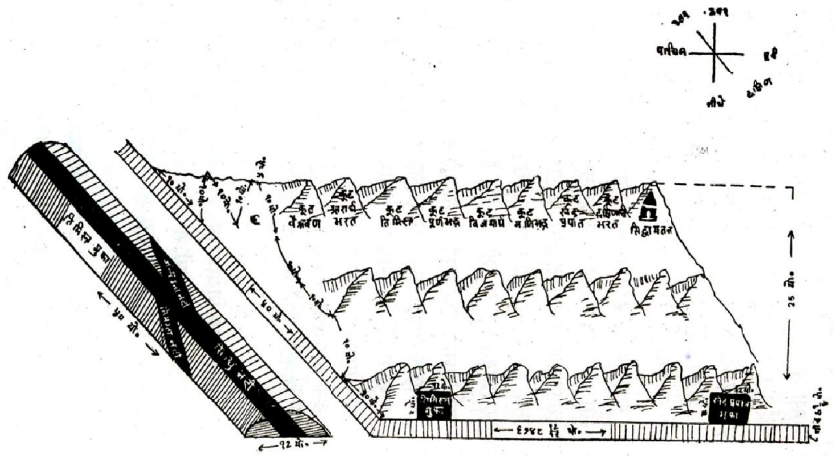

दो महागुफायें—इस विजयार्ध पर्वत में ८ योजन ऊंची (३२००० मील), ५० योजन (२००००० मील) लंबी और १२ योजन (४८०००) मील विस्तृत दो गुफायें हैं। इन गुफाओं के दिव्य युगल कपाट आठ यो. (३२००० मील) ऊंचे, छह यो. (२४००० मील) विस्तीर्ण हैं। गंगा-सिंधु नदियां इन गुफाओं से निकलकर बाहर आकर लवण समुद्र में प्रवेश करती हैं। इन गुफाओं के दरवाजे को चक्रवर्ती अपने दण्डरत्न से खोलते हैं और गुफा के भीतर काकिणीरत्न से प्रकाश करके सेना सहित उत्तर म्लेच्छों में जाते हैं। चक्रवर्ती द्वारा इस पर्वत तक इधर के तीन खंड जीत लेने से आधी विजय हो जाती है अतः इस पर्वत का विजयार्ध यह नाम सार्थक है। ऐसे ही ऐरावत क्षेत्र में विजयार्ध पर्वत है।

गंगा-सिंधु नदी

हिमवान पर्वत के पद्म सरोवर की चारों दिशाओं में चार तोरणद्वार हैं। उनमें पूर्व तोरण से गंगा नदी निकलती है। गंगा नदी का निर्गम स्थान वज्रमय है। ६-१/४ योजन

(२५००० मील) विस्तृत, १/२ कोस (५०० मील) अवगाह से सहित है। यह नदी यहाँ से निकलकर ५०० योजन (२०,००००० मील) पूर्व की ओर जाती हुई गंगा कूट के दो कोश (२००० मील) इधर से दक्षिण की ओर पाँच सौ तेईस योजन (२०९२००० मील) कुछ अधिक १/२ कोश आकर हिमवान् पर्वत के तट पर स्थित जिह्विका के अन्दर प्रविष्ट होकर, पर्वत की तलहटी से पच्चीस यो. (१,००००० मील) आगे बढ़कर नीचे गिरती है। उपर्युक्त जिह्विका (नाली) सींग, मुख, कान, जिह्वा, नयन और भ्रू (भौंह) से गौ के सदृश है इसलिये यह वृषभाकार कहलाती है।

गंगाकुण्ड—गंगा नदी जहाँ पर गिरती है वहाँ पृथ्वीतल पर साठ योजन (२४००००० मील) व्यास वाला गोल कुण्ड है। यह दस योजन (४०००० मी.) गहरा है। इस कुण्ड के बीच में रत्नों से विचित्र आठ योजन (३२००० मी.) विस्तृत द्वीप है। यह धवल जल से ऊपर दो कोश (२००० मील) ऊँचा है। इस महाद्वीप के मध्य भाग में उत्तम वज्रमय पर्वत है। यह दस योजन (४०००० मील) ऊंचा, मूल में चार (१६००० मील) मध्य में दो (८००० मील) और ऊपर एक योजन (४००० मील) चौड़ा है। इसके ऊपर रत्ननिर्मित गंगाकूट नाम से प्रसिद्ध दिव्य भवन है। वह भवन मूल में ३०००, मध्य में २००० और ऊपर १००० धनुष प्रमाण विस्तृत है तथा २००० धनुष ऊंचा कूट के सदृश है। उसमें स्वयं गंगादेवी रहती है। उस भवन के ऊपर कमलासन पर

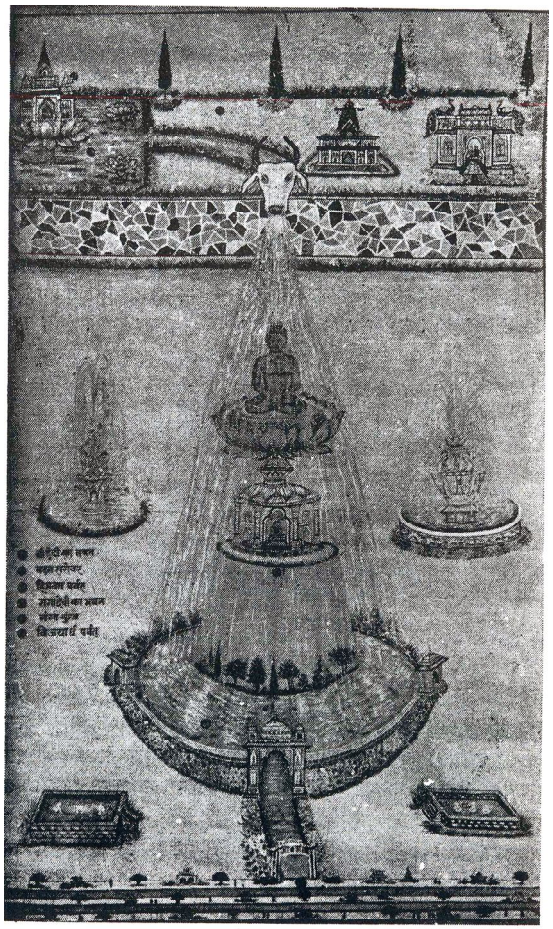

जटामुकुटरूप शेखर से युक्त जिनेन्द्र प्रतिमायें हैं। उन प्रतिमाओं का अभिषेक करते हुए के समान गंगा नदी गंगाकूट पर गिरती है। कुण्ड में चारों ओर तोरण द्वार हैं। यह नदी दक्षिण तोरणद्वार से निकलकर आगे के भूमिभागों में कुटिलता को प्राप्त होती हुई विजयार्ध की गुफा में आठ योजन (३२००० मील) विस्तृत होकर प्रविष्ट होती है।

अन्त में चौदह हजार परिवार नदियों से संयुक्त होकर पूर्व की ओर जाती हुई लवणसमुद्र में प्रविष्ट हुई है। गंगा के निर्गम स्थान का तोरणद्वार ६-१/४ योजन (२५००० मील) चौड़ा और ९-३/८ योजन (३७५०० मील) ऊंचा है। लवण समुद्र के प्रवेश स्थान पर गंगा का तोरणद्वार ९३-३/४ योजन—तिरानवे योजन और तीन कोश (३७५००० मील) ऊंचा है। आधा योजन (२००० मील) अवगाह से सहित है तथा ६२-१/२ योजन (२५००००० मील) विस्तृत है। इन तोरणों पर जिनेन्द्र प्रतिमायें स्थित हैं।

'गंगा[१] नदी के कुण्डों से उत्पन्न हुई परिवार नदियां ढाई म्लेच्छखंडों में ही हैं आर्यखंड में नहीं हैं।'

गंगा[२] कुण्ड में गिरते समय गंगा नदी की धारा की मोटाई २५ योजन (१००००० मील) है और दीर्घता (ऊंचाई) १०० योजन (४००००० मील) है।

इस प्रकार से संक्षेप में गंगा नदी का वर्णन हुआ है। ऐसे ही पद्म सरोवर के पश्चिम तोरणद्वार से सिंधुनदी निकलकर सिंधुकूट में गिरकर आगे पश्चिम समुद्र में प्रवेश करती है। इन दोनों नदियों के दोनों पार्श्व भागों में वनखंड हैं और वेदिका हैं, ये वनखंड अत्रुटितरूप से विजयार्ध की गुफा के अन्दर से बाहर तक चले गये हैं।

भरतक्षेत्र के छः खंड—बीच के विजयार्ध पर्वत और इन दोनों नदियों के निमित्त से भरतक्षेत्र के छह खंड हो गये हैं। भरत के ५२६-६/१९ योजन (२१०५२६३-३/१९ मील) में विजयार्ध की चौड़ाई ५० योजन (२,००००० मील) प्रमाण निकल आती है। यथा—(५२६-६/१९-५०)÷२=२३८-३/१९ योजन दक्षिण भरत के मध्य का भाग आर्यखंड है और शेष पांच खंड म्लेच्छ खंड हैं अर्थात् दक्षिण भरत ९५२६३१-११/१९ मील है।

वृषभाचल—उत्तर भरत के मध्य के खंड में एक पर्वत है जिसका नाम 'वृषभ' है। यह पर्वत १०० योजन (४,००००० मील) ऊंचा है, २५ योजन (१,००००० मील) नींव से युक्त, मूल में १०० योजन (४,००००० मील) मध्य में ७५ योजन (३००००० मील) और उपरिभाग में ५० योजन (२,००००० मील)विस्तार वाला है, गोल है। इस भवन के ऊपर 'वृषभ' नाम से प्रसिद्ध व्यंतर देव का भवन है, उसमें जिनमंदिर है। इस

१.तिलोयपण्णत्ति पृ. १९१। २. जंबूद्वीवपण्णत्ति पृ. ४८

पर्वत के नीचे तथा शिखर पर वेदिका और वनखंड हैं। चक्रवर्ती छह खंड को जीत कर गर्व से युक्त होता हुआ इस पर्वत पर जाकर प्रशस्ति लिखता है। उस समय इसे सब तरफ प्रशस्तियों से भरा हुआ देखकर सोचता है कि मुझ समान अनंतों चक्रियों ने यह वसुधा भोगी है अतः अभिमानरहित होता हुआ दण्डरत्न से एक प्रशस्ति को मिटाकर अपना नाम पर्वत पर अंकित करता है।

आर्यखण्ड-म्लेच्छ खण्ड की व्यवस्था— भरतक्षेत्र के और ऐरावत क्षेत्र के आर्यखंडों में सुषमासुषमा से लेकर षट्काल परिवर्तन होता रहता है। प्रथम, द्वितीय, तृतीय काल में यहाँ की व्यवस्था में चौबीस तीर्थंकर, बारह चक्रवर्ती, नौ बलभद्र, नौ नारायण, नौ प्रतिनारायण ऐसे त्रेसठ शलाका पुरुष जन्म लेते हैं। इस बार यहाँ हुंडावसर्पिणी के दोष से नौ नारद और नौ रुद्र भी उत्पन्न हुए हैं। पुनः पंचम काल और छठा काल आता है। यहाँ अभी पंचम काल चल रहा है। इसमें धर्म का ह्रास होते-होते छठे काल में धर्म नहीं रहता है, प्रायः मनुष्य पाशविक वृत्ति के बन जाते हैं।

विद्याधर की दोनों श्रेणियों की एक सौ दस नगरियों में और पांच म्लेच्छ खंडों में चतुर्थ काल की आदि से लेकर अंत तक काल परिवर्तन होता है।

हैमवत क्षेत्र

रोहित-रोहितास्या नदी

पद्म सरोवर के उत्तर तोरण द्वार से 'रोहितास्या' नदी निकल कर दो सौ छियत्तर योजन से कुछ अधिक २७६-६/१ योजन (११०४००० मील) दूर तक पर्वत के ऊपर बहती है और रोहित् नदी महाहिमवान पर्वत के महापद्म सरोवर के दक्षिण द्वार से निकलकर १६०५-५/१९ योजन (६४२१०५२-१२/१९ मील) प्रमाण पर्वत पर आकर नीचे गिरती है। इन रोहित-रोहितास्या के तोरण द्वार उद्गम स्थान में १२-१/२ योजन (५०००० मील) चौड़े, १८-३/४ योजन (७५००० मील) ऊंचे हैं और जहाँ गिरती है वहाँ के कुण्ड १२० योजन (८४०००० मील) विस्तृत हैं। इनके द्वीप १६ योजन(६४००० मील) विस्तृत और जल के ऊपर एक यो. (४००० मील)ऊंचे हैं। उनमें स्थित पर्वतों की ऊँचाई बीस योजन (८०००० मील) मूल विस्तार आठ योजन (३२००० मील), मध्य विस्तार चार योजन (१६००० मील), शिखर विस्तार दो योजन (८००० मील) है। इन दोनों नदियों में से रोहितास्या की धारा का विस्तार और दीर्घता गंगा नदी के समान है तथा रोहित की धारा का विस्तार पचास योजन (२००००० मील) और दीर्घता (लंबाई) दो सौ योजन (८००००० मील) है। इनके ऊपर रोहित-रोहितास्या देवी के

भवन बने हैं जो कि मूल में ६००० धनुष, मध्य में ४०००, ऊपर में १००० धनुष विस्तृत हैं एवं ४००० धनुष ऊंचे हैं। इन भवनों की छत पर कमलासन पर जिनप्रतिमायें हैं। उन पर नदियों की धारा गिरती है। इन रोहित कूट और रोहितास्या कूट में रोहित, रोहितास्या देवियाँ निवास करती हैं।

नाभिगिरि पर्वत— हैमवत क्षेत्र के बीचोंबीच में एक नाभिगिरि पर्वत है। यह पर्वत गोल है, १००० योजन (४०,००००० मील) ऊँचा, १००० योजन मूल में और ऊपर विस्तृत है। यह पर्वत श्वेतवर्ण का है। इसका नाम 'श्रद्धावान' है। इस पर 'स्वाति' नामक व्यंतर देव का भवन जिनमंदिर से सनाथ है[१]।

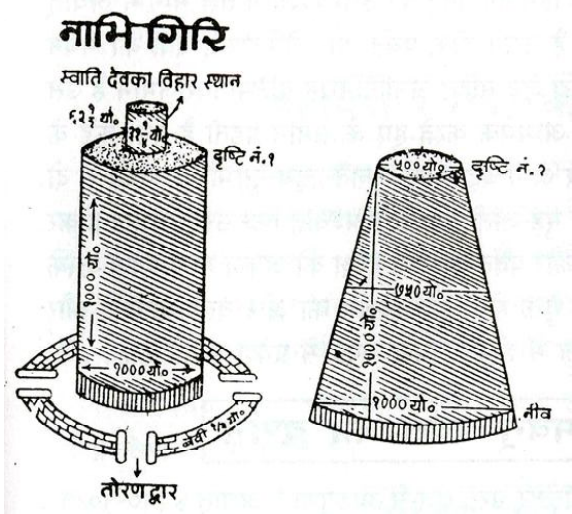

उपर्युक्त रोहितास्या नदी रोहितास्या कुण्ड के उत्तर तोरणद्वार से निकलकर नाभिगिरि पहुँचने से दो कोस इधर से ही पश्चिम दिशा की ओर मुड़ जाती है और हैमवत क्षेत्र में बहती हुई पश्चिम समुद्र में प्रवेश कर जाती है। रोहित नदी रोहितकुण्ड के दक्षिण तोरणद्वार के निकलकर नाभिगिरि की दो कोश से इधर से ही प्रदक्षिणा देते हुए के समान पूर्वाभिमुख होकर आगे बहती हुई पूर्व समुद्र में प्रवेश करती है। ये दोनों नदियाँ २८-२८ हजार परिवार नदियों से सहित हैं, इनके प्रवेश का तोरणद्वार १२५ योजन (५००००० मील) विस्तृत है और १८७-१/२ योजन (७५०००० मील) ऊँचा है।

१.त्रिलोकसार पृ. २९०।

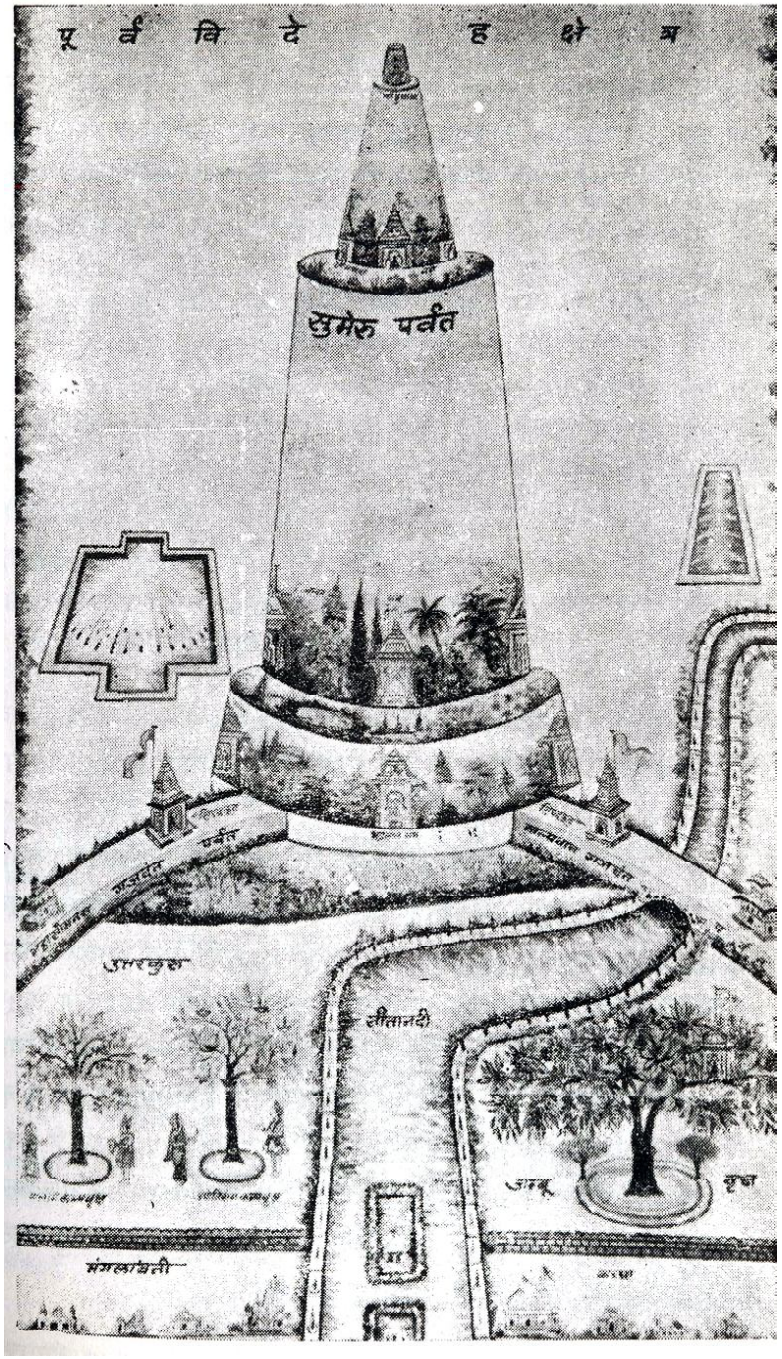

हरिक्षेत्र

हरित-हरिकांता नदी

महापद्म सरोवर के उत्तर तोरणद्वार से हरिकांता नदी निकलकर १६०५-५/१९ योजन प्रमाण (६४२१०५२-१२/१९ मील) पर्वत पर आती है पुनः सौ योजन (४००००० मील) पर्वत से दूर ही हरिकांता कुण्ड में गिरती है तथा हरित नदी निषध पर्वत के तिगिंछ सरोवर के दक्षिण तोरणद्वार से निकलकर ७४२१-१/१९ योजन (२९६८४२१०-१०/१९ मील)पर्वत पर आकर सौ योजन (४००००० मील) पर्वत को छोड़कर ही नीचे हरितकुण्ड में गिरती है। इन दोनों नदियों के उद्गम और प्रवेश के तोरणद्वार, कुण्ड, पर्वत और देवियों के भवनों का प्रमाण तथा नदी की धारा का प्रमाण रोहित नदी से दूना-दूना है, ऐसा समझना।

नाभिगिरि — यहाँ हरिक्षेत्र में १००० योजन (४०,००००० मील) ऊँचा, १००० योजन ही विस्तृत श्वेतवर्ण वाला पर्वत है। इसका नाम 'विजयवान्' है। इस पर चारण नामक व्यंतरदेव का भवन जिनमंदिर सहित है। पूर्वोक्त दोनों नदियाँ दो कोश दूर से ही इस पर्वत को छोड़कर प्रदक्षिणा के आकार से बहती हुई अपनी परिवारनदियों के पूर्व-पश्चिम समुद्र में प्रवेश कर जाती हैं।

विदेह क्षेत्र

सीता-सीतोदा नदी

सीतोदा नदी निषध के तिगिंछ सरोवर के उत्तर तोरण द्वार से निकलकर पर्वत पर ७४२१-१/१९ योजन (२९६८४२१०-१०/१९ मील) तक आकर पर्वत को दो सौ योजन (८००००० मील) छोड़कर नीचे सीतोदा कुंड में गिरी है। सीता नदी भी नील पर्वत के केसरी सरोवर के दक्षिण तोरणद्वार से निकलकर ७४२१-१/१६ योजन (२९६८४२१०-१०/१९ मील) तक पर्वत पर बहकर दो सौ योजन (८००००० मील) नीचे पर्वत को छोड़कर सीताकुंड में नीचे गिरी है। ये दोनों नदियां मेरु पर्वत को दो कोस दूर से ही छोड़कर प्रदक्षिणा के आकार की होती हुई विदेह क्षेत्र में चली जाती हैं। सीता नदी पूर्व विदेह में बहती हुई पूर्व समुद्र में प्रवेश करती है और सीतोदा नदी पश्चिम समुद्र में प्रवेश करती है। सीता-सीतोदा नदियों की परिवार नदियां चौरासी-चौरासी हजार हैं। ये परिवार नदियां देवकुरु-उत्तरकुरु क्षेत्र में ही बहती हैं।

सुमेरु पर्वत

विदेहक्षेत्र के बीचोंबीच में सुमेरु पर्वत है। यह पृथ्वी से ९९००० योजन (३९६०,००००० मील) ऊंचा है। इसकी नींव पृथ्वी के नीचे १००० योजन (४०,००००० मील) गहरी है। इसकी चूलिका ४० योजन (१६०००० मील) है। मेरु पर्वत के ऊपर ५०० योजन (२०,००००० मील) जाकर नंदनवन है, उसका विस्तार ५०० योजन (२०,००००० मील) प्रमाण है। यह नंदनवन मेरु पर्वत के चारों ओर भीतर भाग में अवस्थित है। नंदनवन से ६२५०० योजन (२५०००००००मील) ऊपर जाकर सौमनसवन है। इसका विस्तार भी चारों तरफ ५०० योजन (२०००००० मील) है। सौमनसवन से ३६००० योजन (१४,४०,००००० मील) ऊपर जाकर पांडुकवन है। इस पांडुकवन का विस्तार ४९४ योजन है अर्थात् (१९,७६००० मील) है।

इस पांडुकवन के ठीक बीच में सुमेरु की चूलिका है। इसका विस्तार मूल में १२ योजन (४८००० मील), मध्य में ८ योजन (३२००० मील) और अग्रभाग में ४ योजन

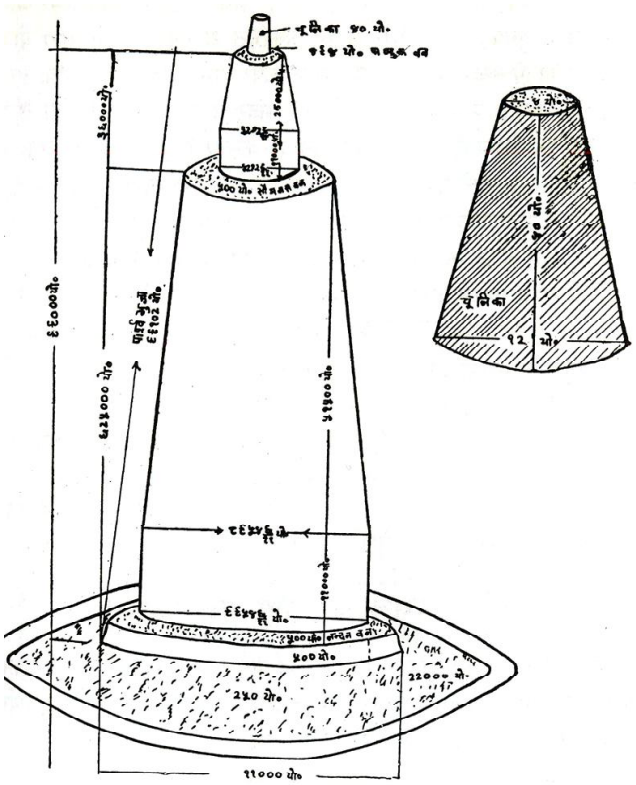

(१६००० मील) मात्र है। यह ४० योजन (१६०००० मील) ऊँची है। यह मेरु पर्वत नींव में १००९०-१०/११ योजन (४०३६३६३६-४/११ मील) चौड़ा है। १००० योजन (४०००००० मील) के बाद अर्थात् पृथ्वी के ऊपर भद्रसाल वन में १०००० योजन (४००००००० मील) चौड़ा है।

यह पर्वत नंदनवन के बाह्य भाग में ९९५४-६/११ योजन(३९८१८१८१-९/११ मील) है, आगे घटते-घटते सौमनसवन में इसका बाह्य विस्तार ४२७२-८/११ योजन (१७०९०९०९-१/११ मील) तथा अभ्यंतर भाग में ३१७-८/११ योजन (१२७०९०९-१/११) मील) है, आगे पांडुकवन में बाह्य विस्तार १००० योजन (४०००००० मील) है। अभ्यंतर भाग में १२ योजन (४८००० मील) की चूलिका है वही विस्तार है।

पर्वत के घटने का क्रम—इस पर्वत के विस्तार में मूल से एक प्रदेश से ग्यारह प्रदेशों पर एक प्रदेश की हानि हुई है। इसी प्रकार ग्यारह अंगुल जाने पर एक अंगुल, ग्यारह हाथ जाने पर एक हाथ की एवं ग्यारह योजन जाने पर एक योजन की हानि हुई है। इस पर्वत में नंदनवन और सौमनस की कटनी पाँच-पाँच सौ योजन (२०००००० मील-२०००००० मील) की है अतः नंदनवन के ऊपर और सौमनसवन से ऊपर ११००० योजन (४४००००००० मील) तक समान विस्तार वाला है अर्थात् वहाँ घटने का क्रम नहीं है। बाकी सर्वत्र उपर्युक्त क्रम से घटा है।

मेरू पर्वत की परिधियाँ—मेरू पर्वत की छह परिधियों में से प्रथम परिधि हरितालमयी, दूसरी वैडूर्यमणि, तीसरी सर्वरत्नमयी, चौथी वज्रमयी, पांचवीं पंचवर्ण और छठी लोहितवर्ण है। मेरु के जो ये परिधि भेद हैं वे भूमि से होते हैं। प्रत्येक परिधि का विस्तार १६५०० योजन (६६०००००० मील) है। सातवीं परिधि वृक्षों से की गई है। सातवीं परिधि के ११ भेद हैं। भद्रसालवन, मानुषोत्तरवन, देवरमण, नागरमण, भूतरमण ये पांच वन भद्रसालवन में हैं। नंदनवन, उपनंदनवन ये दो वन नंदनवन में हैं। सौमनसवन, उपसौमनसवन ये दो वन सौमनसवन में हैं। पांडुक, उपपांडुकवन ये दो वन पांडुकवन में हैं। ये सब बाह्य भाग से हैं[१]।

मेरु पर्वत का वर्ण—यह पर्वत मूल में (नींव में) १००० योजन (४०००००० मील) तक वज्रमय है। पृथ्वीतल से लेकर ६१००० योजन (२४४०००००० मील) तक उत्तम रत्नमय, ऊपर ३८००० योजन (१५२०००००० मील) तक सुवर्णमय है और चूलिका वैडूर्यमणिमय है।

भद्रसाल वन— सुमेरु पर्वत के चारों तरफ पृथ्वी पर भद्रसाल वन है। यह

१. लोकविभाग पृ. ३०।

पूर्व-पश्चिम में २२००० योजन (८८०००००० मील) है और दक्षिण-उत्तर में २५० योजन (१०००००० मील) चौड़ा है। इस भद्रसाल वन में चारों दिशाओं में चार[१] चैत्यालय हैं। ये चैत्यालय सौ योजन लंबे, पचास योजन चौड़े और पचहत्तर योजन ऊंचे हैं। इनका वर्णन त्रिलोकसार आदि में बड़ा ही मनोरम है। इन चैत्यालयों में १०८-१०८ जिनप्रतिमायें हैं, जो बहुत ही सुन्दर हैं। भद्रसाल वन के बाह्य-अभ्यंतर दोनों पार्श्वभाग में वेदिका है जो एक योजन (४००० मील) ऊंची,अर्ध योजन (२००० मील) चौड़ी है।

नंदनवन—नंदनवन सर्वत्र पांच सौ योजन (२००००० मील) विस्तृत है। इसकी चारों दिशाओं में भी भद्रसाल वन के चैत्यालय सदृश चार चैत्यालय हैं। नंदन वन में ईशान विदिशा में एक बलभद्र नाम का कूट है।

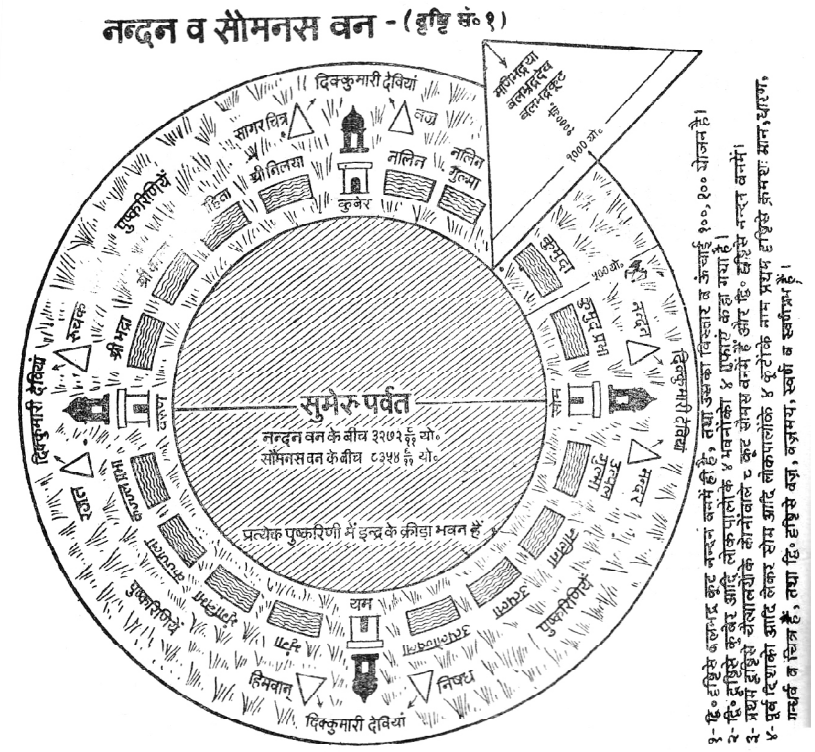

१. ये चैत्यालय लघु योजन से हैं अतः ८०० मील लंबे, ४०० मील चौड़े और ६०० मील ऊँचे हैं।

यह १०० योजन (४००००० मील) ऊंचा, १०० योजन चौड़ा और ऊपर में ५० योजन (२००००० मील) विस्तृत है। नंदनवन में नंदन, मंदर, निषध, हिमवान् ,रजत, रुचक, सागर और वज्र ये आठ कूट हैं। ये सुवर्णमयी, ५०० योजन (२०००००० मील) ऊंचे, ५०० योजन (२०००००० मील) मूल में विस्तृत हैं और २५० योजन (१०००००० मील) ऊपर में विस्तृत हैं। बलभद्र कूट में बलभद्र नाम का देव और इन[१] कूटों में दिक्कुमारी देवियां रहती हैं।

सौमनस वन—सौमनसवन में भी चारों दिशाओं में चार चैत्यालय हैं वे प्रमाण में नंदनवन[२] से आधे हैं। वहाँ भी नौ कूट हैं।

इस वन की पुष्करिणी में इन्द्र सभा की रचना

(ह-पु । ५।३३८-३४०)

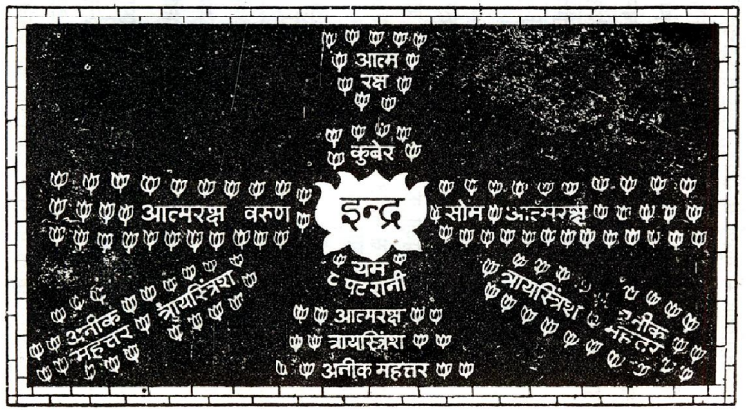

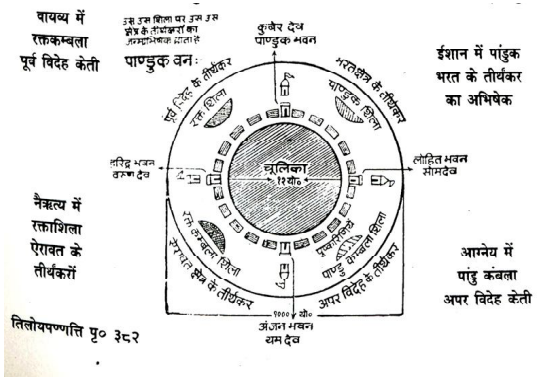

१. अर्थात् ४०० मील लंबे, २०० मील चौड़े और ३०० मील ऊँचे हैं। २. २०० मी. लम्बे, १०० मी. चौड़े और १५० मील ऊँचे हैं।

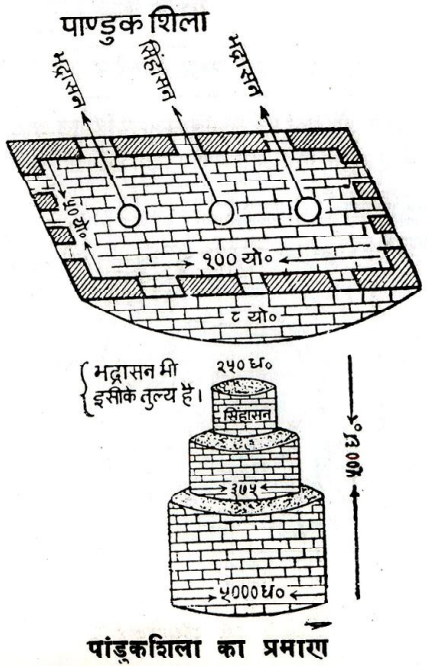

पांडुकशिला का प्रमाण

पांडुकवन—पांडुक वन की चारों दिशाओं में चार चैत्यालय हैं जो कि प्रमाण में १०० कोश लंबे, ५० कोश चौड़े और ७५ कोश ऊंचे हैं।

पांडुकशिला—इस वन की चारों विदिशाओं में चार शिलायें हैं। ईशान दिशा में पांडुकशिला, आग्नेय में पांडुकंबला, नैऋत्य में रक्ता और वायव्य में रक्तकंबला नाम वाली हैं। ये शिलायें अर्ध चन्द्राकार हैं। १०० योजन (४००००० मील) लंबी, ५० योजन (२०००००मील) चौड़ी और ८ योजन (३२००० मील) मोटी हैं। इन शिलाओं के ऊपर बीच में तीर्थंकर के लिये सिंहासन है और उसके आजू-बाजू सौधर्म-ईशान इन्द्र के लिये भद्रासन हैं। ये आसन गोल हैं।

पांडुकशिला पर भरतक्षेत्र के तीर्थंकरों का और पांडुकंबला पर पश्चिम विदेह के तीर्थंकरों का, रक्ता शिला पर पूर्व विदेह के तीर्थंकरों का और रक्तकंबला पर ऐरावत क्षेत्र के तीर्थंकरों का अभिषेक होता है।

विशेष—नंदन और सौमनसवन में सौधर्म इन्द्र के लोकपालों के भवन, अनेकों बावड़ियां, सौधर्म इन्द्र की सभा आदि अनेकों वर्णन हैं जो कि तिलोयपण्णत्ति आदि से ज्ञातव्य हैं। यहाँ संक्षेप मात्र में दिग्दर्शन कराया गया है।

विदेह क्षेत्र का विस्तार—इस विदेहक्षेत्र का विस्तार ३३६८४-४/१९ योजन (१३४७३६८४२-२/१९ मील) है। इस क्षेत्र के मध्य की लंबाई १००००० योजन (४००००००० मील) चालीस करोड़ मील है।

गजदंत पर्वत—भद्रसालवन में मेरु की ईशान दिशा में माल्यवान्, आग्नेय में महासौमनस, नैऋत्य में विद्युत्प्रभ और वायव्य विदिशा में गंधमादन ये चार गजदंत पर्वत हैं। दो पर्वत निषध और मेरु का तथा दो पर्वत नील और मेरु का स्पर्श करते हैं।

ये पर्वत सर्वत्र ५०० योजन (२०००००० मील) विस्तृत हैं और निषध-नील

पर्वत के पास ४०० योजन (१६००००० मील) ऊँचे; तथा मेरु के पास ५०० योजन (२०००००० मील) ऊँचे हैं। ये पर्वत ३०२०९-६/१९ योजन (१२०८३७२६३-३/१९ मील) लंबे हैं। सदृश आयत हैं। इन

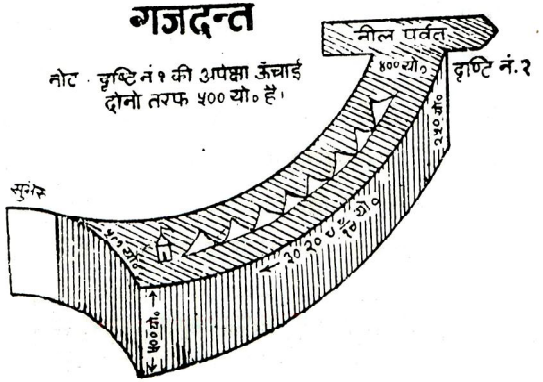

गजदंतों में नील और निषध के पास का अंतराल ५३००० योजन (२१२००००० मील) आता है।

माल्यवंत और विद्युत्प्रभ इन दो गजदंतों में सीता-सीतोदा नदी निकलने की गुफा है। सीता नदी नील पर्वत के केसरी सरोवर के उत्तर-द्वार से निकलकर पृथ्वी पर सीताकुंड में गिरकर आगे बहती हुई जाती है पुनः माल्यवान् पर्वत की गुफा में प्रवेश कर बाहर निकलकर मेरु की प्रदक्षिणा करते हुए पूर्वभाग में चली जाती है। ऐसे ही सीतोदा नदी निषध के तिगिंछ सरोवर के दक्षिणद्वार से निकलकर विद्युत्प्रभ गजदंत की गुफा में प्रवेश कर बाहर निकलकर मेरु की अर्द्ध प्रदक्षिणा देकर पश्चिम भाग में चली जाती है।

माल्यवान् पर्वत का वर्ण वैडूर्यमणि जैसा है। महासौमनस का रजतमय, विद्युत्प्रभ का तपाये सुवर्ण सदृश और गंधमादन का सुवर्ण सदृश है।

माल्यवान् पर्वत के नव कूटों के नाम—सिद्धकूट, माल्यवान् , उत्तरकौरव, कच्छ, सागर, रजत, पूर्णभद्र, सीता और हरिसह ये नवकूट हैं। सुमेरु के पास का कूट सिद्धकूट है। यह १२५ योजन (५००००० मील) ऊँचा, मूल में १२५ योजन (५००००० मील) विस्तृत और ऊपर ६२-१/२ योजन (२५०००० मील) विस्तृत है। अंतिम कूट हरिसह १०० योजन (४००००० मील) ऊँचा, १०० योजन मूल में विस्तृत और उपरिमभाग में ५० योजन (२००००० मील) है। शेष कूट पर्वत की ऊँचाई के चौथाई भागप्रमाण यथायोग्य हैं। सिद्धकूट में जिनमंदिर तथा शेष में देव-देवियों के आवास हैं।

महासौमनस पर्वत के ७ कूट के नाम—सिद्ध, सौमनस, देवकुरु, मंगल, विमल, कांचन, वशिष्ट ये ७ कूट हैं।

विद्युत्प्रभ के नव कूटों के नाम—सिद्ध, विद्युत्प्रभ, देवकुरु, पद्म, तपन, स्वस्तिक, शतज्वाल, सीतोदा और हरिकूट।

गंधमादन के ७ कूटों के नाम—सिद्ध, गंधमादन, उत्तरकुरु, गंधमालिनी, लोहित, स्फटिक और आनंद ये सात कूट हैं।

विशेष—इनमें सिद्धकूटों में जिनमंदिर, शेष में यथायोग्य देव-देवियों के आवास हैं। चारों के सिद्धकूट १२५ योजन (५००००० मील) ऊँचे एवं अंत के कूट १०० योजन (४००००० मील) ऊँचे हैं। शेष अपने-अपने पर्वतों के ऊँचाई के चतुर्थभाग प्रमाण ऊँचे हैं।

बत्तीस विदेह

मेरू की पूर्व दिशा में पूर्वविदेह और पश्चिम दिशा में पश्चिमविदेह हैं। पूर्व विदेह के बीच में सीता नदी है। पश्चिम विदेह के बीच में सीतोदा नदी है। इन दोनों नदियों के दक्षिण-उत्तर तट होने से चार विभाग हो जाते हैं। इन एक-एक विभाग में आठ-आठ विदेह देश हैं।

पूर्व-पश्चिम में भद्रसाल की वेदी है उसके आगे वक्षार पर्वत, उसके आगे विभंगा नदी, उसके आगे वक्षार पर्वत, उसके आगे विभंगा नदी, उसके आगे वक्षार पर्वत, उसके आगे विभंगा नदी, उसके आगे वक्षार पर्वत, उसके आगे देवारण्य व भूतारण्य की वेदी, ये नव हुए। इन नव के बीच-बीच में आठ विदेहदेश हैं। इस प्रकार सीता-सीतोदा के दक्षिण-उत्तर तट संबंधी बत्तीस विदेह हो जाते हैं।

सोलह वक्षार और बारह विभंगा नदी

सीतानदी के उत्तर तट में भद्रसाल की वेदी से लेकर आगे क्रम से चित्रकूट, पद्मकूट, नलिनकूट और एकशैल ये चार वक्षार पर्वत हैं। गाधवती, द्रहवती,पंकवती ये तीन विभंगा नदियाँ हैं।

सीतानदी के दक्षिण तट में देवारण्य वेदी से लगाकर क्रम से त्रिकूट, वैश्रवण, अंजनात्मा, अंजन ये वक्षारपर्वत और तप्तजला, मत्तजला, उन्मत्तजला ये तीन विभंगा नदियाँ हैं।

पश्चिम विदेह की सीतोदा नदी के दक्षिण तट में भद्रसाल वेदी से लगाकर क्रम से श्रद्धावान् , विजटावान् , आशीविष, सुखावह ये चार वक्षार और क्षारोदा, सीतोदा, स्रोतोवाहिनी ये तीन विभंगा नदियाँ हैं।

इसी पश्चिम विदेह की सीतोदा नदी के उत्तर तट में देवारण्य की वेदी से लगाकर

क्रम से चंद्रमाल, सूर्यमाल, नागमाल, देवमाल ये चार वक्षार पर्वत हैं। गंभीरमालिनी, फेनमालिनी, ऊर्मिमालिनी ये तीन विभंगा नदियाँ हैं।

वक्षार पर्वतों का वर्णन—ये वक्षार पर्वत सुवर्णमय हैं। प्रत्येक वक्षार शैलों का विस्तार ५०० योजन (२०००००० मील) है और लंबाई १६५९२-२/१९ योजन (६६३६८४२१-१/१९ मील) तथा ऊँचाई निषध-नील पर्वत के पास ४०० योजन (१६००००० मील) एवं सीता-सीतोदा नदी के पास ५०० योजन (२०००००० मील) है। प्रत्येक वक्षार पर चार-चार कूट हैं। नदी के तरफ के कूट सिद्धकूट हैं उन पर जिन चैत्यालय हैं। बचे तीन-तीन कूटों में से एक-एक कूट वक्षार पर्वत के नाम के हैं एवं दो-दो कूट के अपने-अपने वक्षार के पूर्व-पश्चिम पार्श्व के दो विदेह देशों के जो नाम हैं वे ही नाम हैं। यथा—चित्रकूट वक्षार के ऊपर सिद्धकूट, चित्रकूट, कच्छा, सुकच्छा ये नामधारक कूट हैं।

विभंगा नदियों का प्रमाण—ये नदियाँ निषध-नील पर्वत की तलहटी के पास कुंड से निकलती हैं। अपने-अपने कुंड के पास उत्पत्ति स्थान में ५० कोस (५०००० मील) तथा सीता-सीतोदा नदियों के पास प्रवेश स्थान में ५०० कोश (५००००० मील) प्रमाण हैं। इन नदियों की परिवार नदियाँ २८-२८ हजार हैं।

देवारण्यवन—पूर्व-पश्चिम विदेह के अन्त में सीता-सीतोदा दोनों नदी के दक्षिण-उत्तर दोनों तट में चार देवारण्य नाम के वन हैं अर्थात् विदेह के अन्त में समुद्र के पास देवारण्य नाम के वन हैं।

विदेह के बत्तीस देशों के नाम—सीता नदी के उत्तर तट में भद्रसाल से लगाकर कच्छा, सुकच्छा, महाकच्छा, कच्छकावती, आवर्ता, लांगलावर्ता, पुष्कला, पुष्कलावती ये आठ देश हैं।

सीता नदी के दक्षिण तट में देवारण्य की वेदी से इधर क्रम से वत्सा, सुवत्सा, महावत्सा, वत्सकावती, रम्या, सुरम्या, रमणीया, मंगलावती ये आठ देश हैं।

सीतोदा नदी के दक्षिण तट में भद्रसाल वेदी से आगे क्रम से पद्मा,सुपद्मा-महापद्मा, पद्मकावती, शंखा, नलिनी, कुमुद, सरित ये आठ देश हैं।

सीतोदा नदी के उत्तर तट में देवारण्य वेदी से लेकर क्रम से वप्रा, सुवप्रा, महावप्रा, वप्रकावती, गंधा, सुगंधा, गंधिला, गंधमालिनी ये आठ देश हैं।

एक-एक देश के छह-छह खंड—ये विदेह देश पूर्वापर २२१२-७/८ योजन (८८५१५०० मील) विस्तृत हैं। प्रत्येक क्षेत्र की दक्षिण-उत्तर लंबाई १६५९२-२/१९ योजन प्रमाण है। इन विदेह देशों के बहुमध्य भाग में ५० योजन (२००००० मील) और

देश के विस्तार समान लम्बा अर्थात् २२१२-७/८ योजन (८८५१५०० मील) लम्बा विजयार्ध पर्वत है। इन विजयार्धों में भी दोनों पार्श्व भागों में दो-दो श्रेणियां हैं। अन्तर इतना ही है कि इनमें विद्याधर श्रेणियों में दोनों तरफ ५५-५५ नगरियां हैं अतः एक-एक विजयार्ध संबंधी ११०-११० नगरियाँ हैं। इन विजयार्धों पर भी नव-नव कूट हैं और दो-दो महागुफायें हैं जो पूर्वोक्त प्रमाण वाली हैं।

गंगा-सिंधु नदियाँ—सीता-सीतोदा के दक्षिण तट के देशों में दो-दो नदियाँ हैं उनके गंगा-सिंधु नाम हैं। वे नील पर्वत के पास जो कुंड हैं उनसे निकलकर सीधे दक्षिण दिशा में आती हुई विजयार्ध की गुफा से निकलकर आगे आकर सीता-सीतोदा नदी में मिल जाती हैं। इनके उद्गम स्थान में तोरण द्वार ६-१/४ योजन (२५००० मील) चौड़ा है और प्रवेश स्थान में तोरण द्वार ६२-१/२ योजन (२५०००० मील) चौड़ा है।

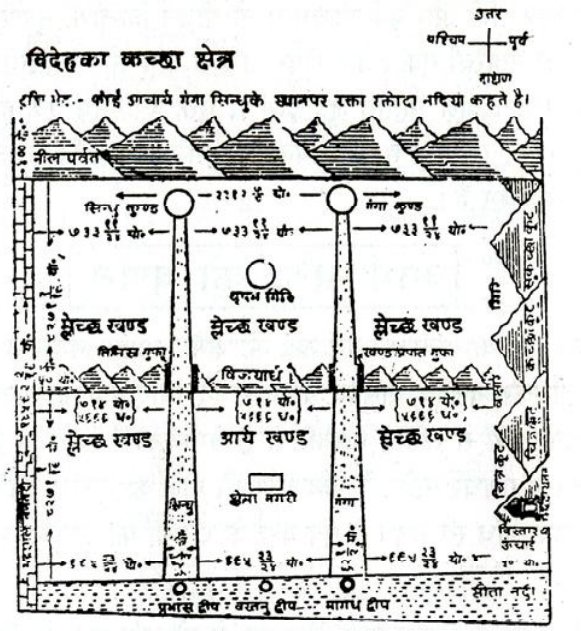

रक्ता-रक्तोदा नदियाँ—सीता-सीतोदा के उत्तर तट में दो-दो नदियाँ हैं। उनके नाम रक्ता-रक्तोदा हैं। ये नदियाँ निषध पर्वत के पास के कुंडों से निकलकर उत्तर दिशा में जाती हुई विजयार्ध पर्वत की गुफा में प्रवेश कर आगे निकल कर सीता-सीतोदा नदियों में मिल जाती हैं। इनके भी उद्गम—प्रवेश के तोरणद्वार पूर्वोक्त गंगा-सिंधु के

समान हैं। प्रत्येक देश में एक विजयार्ध और दो नदियों के निमित्त से छह-छह खंड हो जाते हैं। इनमें एक आर्यखंड और पाँच म्लेच्छ खंड कहलाते हैं।

पूर्वोक्त कच्छा आदि विदेह देशों की मुख्य-मुख्य राजधानी इन आर्यखंडों में हैं, कच्छा आदि देश की राजधानियों के नाम—क्षेमा, क्षेमपुरी, अरिष्टा, अरिष्टपुरी आदि हैं। इन विदेहदेश के पांच म्लेच्छ खण्डों में से मध्य के म्लेच्छ खण्ड में एक-एक वृषभाचल पर्वत है अतः विदेह के ३२ वृषभाचल पर्वत हो गए हैं। इन पर वहाँ के चक्रवर्ती अपनी-अपनी प्रशस्तियां लिखते हैं। वहाँ विदेह की गंगा-सिंधु और रक्ता-रक्तोदा की परिवार नदियाँ भी १४-१४ हजार हैं।

इस प्रकार संक्षेप में विदेह के बत्तीस भेदों का वर्णन किया है।

यमकगिरि—नील पर्वत से मेरु की तरफ आगे हजार योजन आकर सीता नदी के पूर्व तट पर 'चित्र' और पश्चिम तट पर 'विचित्र' नाम के दो पर्वत हैं। ऐसे ही निषध पर्वत से मेरु की तरफ आगे हजार योजन जाकर सीतोदा के पूर्व तट पर 'यमक' और पश्चिम तट पर 'मेघ' नाम के दो पर्वत हैं। इन चारों को यमकगिरि कहते हैं। ये चारों पर्वत गोल हैं। इन चित्र-विचित्र के मध्य में पाँच सौ योजन (२०००००मील) का अन्तराल है, उस अंतराल में सीता नदी है। ऐसे ही यमक और मेघ पर्वत के मध्य भाग में पाँच सौ योजन के अन्तराल में सीतोदा नदी है।

ये पर्वत १००० योजन (४०००००मील) ऊँचे, मूल में १००० योजन विस्तृत और ऊपर में ५०० योजन (२०००००० मील) विस्तृत हैं। इन पर्वतों पर अपने-अपने पर्वत के नाम वाले व्यंतर देवों के भवन हैं।

सीता-सीतोदा नदी के बीस सरोवर[१]—यमकगिरि जहाँ पर हैं वहाँ से पाँच सौ योजन (२०,००००० मील) जाकर सीता और सीतोदा नदी में पाँच-पाँच सरोवर हैं अर्थात् देवकुरु-उत्तरकुरु भोगभूमि के दो क्षेत्र हैं और पूर्व-पश्चिम भद्रसाल के दो क्षेत्र हैं। उनमें पाँच-पाँच सरोवर हैं। ये सरोवर पाँच सौ-पाँच सौ योजन अर्थात् यमकगिरि के स्थान से ५०० योजन के अन्तराल से हैं, (२०००००

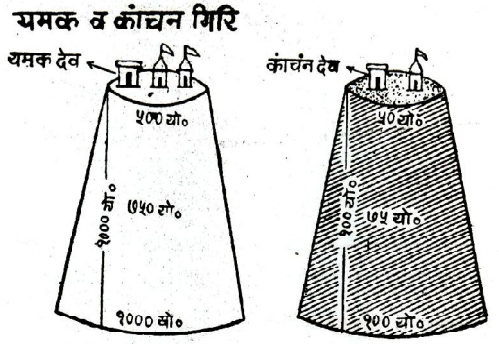

१. त्रिलोकसार और उत्तरपुराण में २० सरोवर माने हैं। तिलोयपण्णत्ति में १० माने हैं।

मील) आगे जाकर मेरु की तरफ सीता-सीतोदा नदी में एक-एक सरोवर हैं, पुनः पाँच सौ योजन आगे जाकर एक-एक सरोवर हैं, ऐसे पाँच-पाँच सरोवर हैं। ये देवकुरु-उत्तरकुरु में हैं। इसी प्रकार सीता-सीतोदा नदी के भीतर पाँच-पाँच सरोवर पूर्व-पश्चिम भद्रसाल में हैं। ऐसे ये बीस सरोवर सीता-सीतोदा नदी के बीच में हैं।

ये सरोवर नदी की चौड़ाई प्रमाण चौड़े और १००० योजन लम्बे हैं। इनकी चौड़ाई ५०० योजन है, ऐसा तिलोयपण्णत्ति में कहा है। इन सरोवरों की चौड़ाई और लम्बाई नदी के प्रवाह में है। इन सरोवरों में एक-एक मुख्य कमल हैं वे एक-एक योजन विस्तृत हैं। शेष परिवार कमल १,४०,११५ हैं। सभी सरोवरों में परिवार कमलों की इतनी ही संख्या है। इन कमलों पर नागकुमारी देवियाँ अपने-अपने परिवार सहित रहती हैं।

ये सरोवर नदी के प्रवेश करने और निकलने के द्वार से सहित हैं। नदी के प्रवाह के बीच में इन सरोवरों की तटवेदियाँ बनी हुई हैं।

कांचनगिरि—इन बीस सरोवरों के दोनों तटों पर पंक्तिरूप से पाँच-पाँच कांचनगिरि हैं। एक तट संबंधी २०×५=१००,दूसरे तट संबंधी २०×५=१००,ऐसे १००+१००=२०० कांचनगिरि हैं। ये पर्वत १०० योजन (४००००० मील) ऊँचे, मूल में १०० योजन विस्तृत और ऊपर में ५० योजन (२०००० मील) विस्तृत हैं। इन पर्वतों के ऊपर अपने-अपने पर्वत के नाम वाले देवों के भवन हैं। इनमें रहने वाले देव शुक (तोते के) वर्ण वाले हैं। देवों के भवन के द्वार सरोवरों के सन्मुख हैं अतः ये पर्वत अपने-अपने सरोवर के सन्मुख कहलाते हैं।

विशेष—सरोवर से आगे २०९२-२/१९ योजन (८३६८४२१-१/१९ मील) जाकर नदी के प्रवेश करने के द्वार से सहित दक्षिण भद्रसाल और उत्तर भद्रसाल की वेदिका है अर्थात् अन्तिम सरोवर और भद्रसाल की वेदी का इतना अंतराल है।

दिग्गज पर्वत—देवकुरु-उत्तरकुरु भोगभूमि में और पूर्व-पश्चिम भद्रसाल में महानदी सीता-सीतोदा हैं। उनके दोनों तटों पर दो-दो दिग्गजेंद्र पर्वत हैं। ये पर्वत आठ हैं। ये १०० योजन (४००००० मील) ऊँचे, मूल में १०० योजन विस्तृत और ऊपर भाग में ५० योजन (२००००० मील) प्रमाण हैं।

इनके नाम—पूर्व भद्रसाल में पद्मोत्तर, नील, देवकुरु में स्वस्तिक, अंजन, पश्चिम भद्रसाल में कुमुद, पलाश, उत्तरकुरु में अवतंस और रोचन ये नाम हैं। इन पर्वतों पर दिग्गजेंद्र देव रहते हैं।

देवकुरु-उत्तरकुरु भोगभूमि—मेरु और निषध पर्वत के मध्य में देवकुरु और मेरु तथा नील पर्वत के मध्य में उत्तरकुरु हैं। कुरुक्षेत्र का विस्तार ११८४२-२/१९

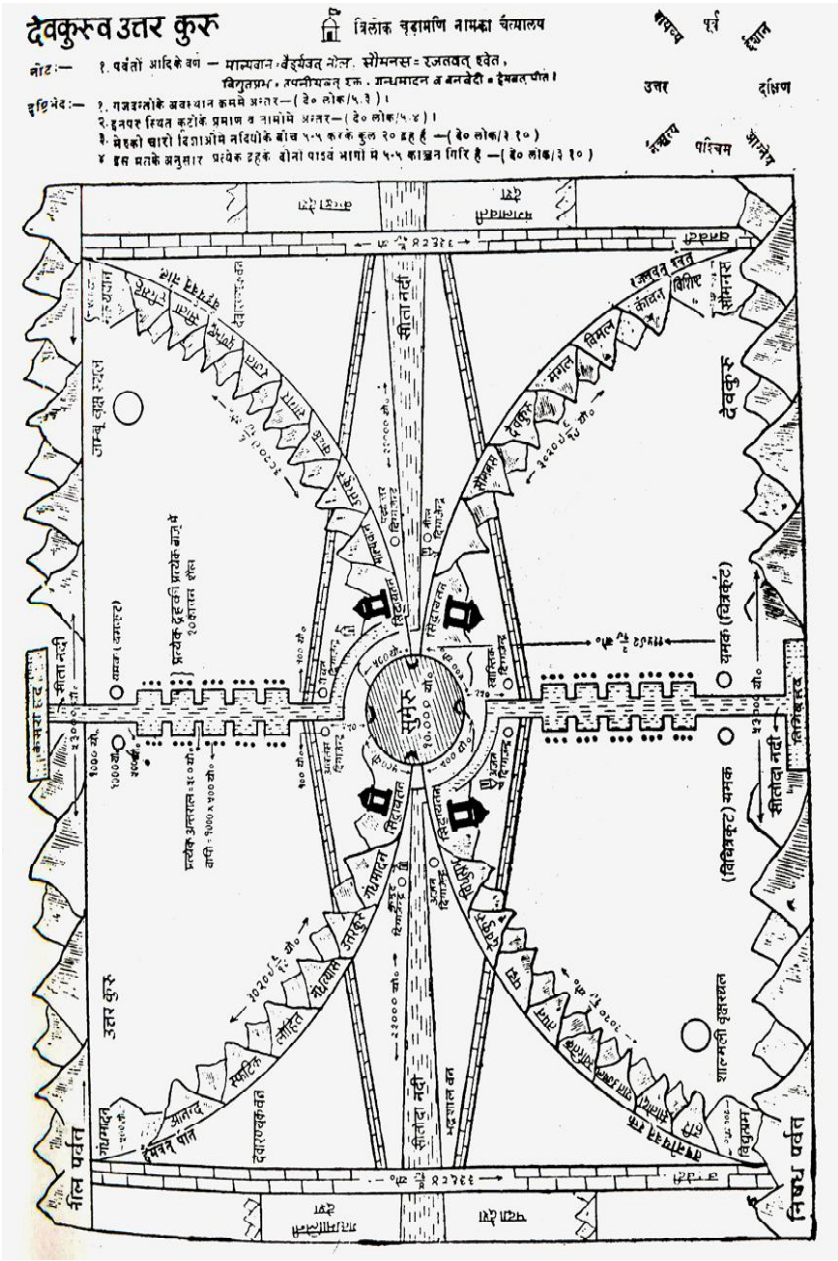

योजन (४७३६४२१-१/१९ मील) प्रमाण है। कुरुक्षेत्रों का वृत्त विस्तार ७११४३-४/१९ योजन (२८४५७२८४२-२/१९ मील) तथा एक कला का नौवां अंश (१/१९×९) है। कुरुक्षेत्र की जीवा ५३००० योजन (२१२०००००० मील) और उसके धनुष का प्रमाण ६०४१८-१२/१९ योजन (२४१६७४५२६-६/१९ मील) प्रमाण है। इसमें उत्तर भोगभूमि की व्यवस्था है।

जंबूवृक्ष— मेरु पर्वत के ईशान कोण में सीता नदी के पूर्व तट पर नील पर्वत के पास में जंबूवृक्ष का स्थल है। इस स्थल के ऊपर सब ओर आधा योजन (२०००मील) ऊँची १/१६ योजन (२५० मील) विस्तृत रत्नों से व्याप्त एक वेदिका है। ५०० योजन (२०००००० मील) विस्तार वाले और मध्य में आठ योजन (३२०००मील) तथा अन्त में दो कोस (२०००मील) मोटाई से संयुक्त उस सुवर्णमय उत्तम स्थल के ऊपर मूल में, मध्य में और ऊपर यथाक्रम से १२ योजन (४८०००मील), ८ योजन (३२००० मील), ४ योजन (१६०००मील) विस्तृत तथा ८ योजन (३२००० मील) ऊँची जो पीठिका है उसकी बारह पद्मवेदिकायें हैं।

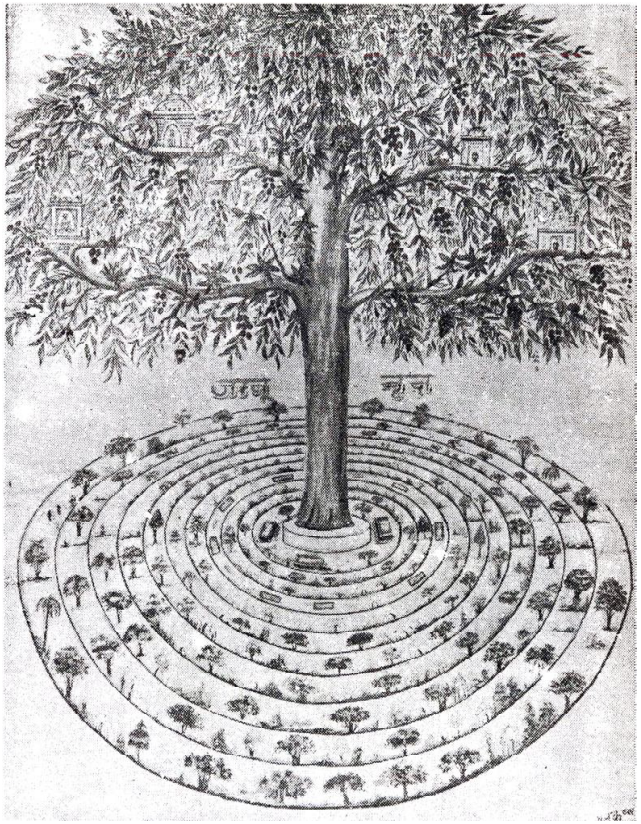

इस पीठिका पर बहुमध्य भाग में जंबूवृक्ष है, यह ८ योजन (३२००० मील) ऊँचा है, इसकी वज्रमय जड़ दो कोस (२००० मील) गहरी है। इस वृक्ष का दो कोस (२०००मील) मोटा, दो योजन (८०००मील) मात्र ऊँचा स्कंध है। इस वृक्ष की चारों दिशाओं में चार

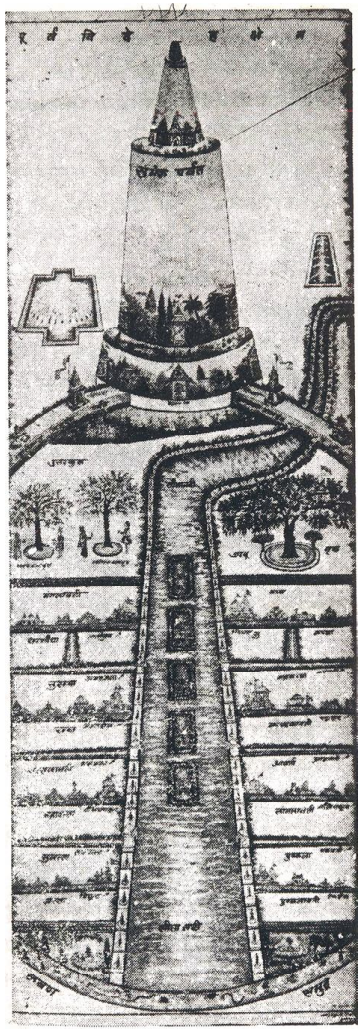

महाशाखायें हैं। इनमें से प्रत्येक शाखा ६ योजन (२४०००मील) लम्बी है[१] और इतने मात्र अन्तर से सहित है। इनके सिवाय क्षुद्रशाखायें अनेकों हैं। यह वृक्ष पृथ्वीकायिक है, जामुन के वृक्ष के समान इनमें फल लटकते हैं अतः यह जंबूवृक्ष कहलाता है अर्थात् यह वृक्ष १० योजन[२] (४००००मील) ऊँचा, मध्य में ६-१/४ योजन (२५,००० मील) चौड़ा और ऊपर चार योजन (१,६०,०००मील) चौड़ा है।

सुमेरु के उत्तर भाग में उत्तरकुरु भोगभूमि है इसमें अर्थात् मेरु की ईशान दिशा में स्थित जंबूवृक्ष और उसकी बारह पद्म वेदिकायें।

शाखा पर जिनमंदिर— जंबूवृक्ष की उत्तरदिशा संबंधी, नील कुलाचल की तरफ जो शाखा है उस शाखा पर जिनमंदिर है। शेष तीन दिशा की शाखाओं पर आदर-अनादर नामक व्यंतर देवों के भवन हैं। इस मुख्यवृक्ष के चारों तरफ जो बारह पद्म वेदिकायें बताई हैं, उनमें प्रत्येक में चार-चार तोरणद्वार हैं। उनमें इस जंबूवृक्ष के परिवार वृक्ष हैं। उनकी संख्या १,४०,११९ है। इनमें चार देवांगनाओं के चार वृक्ष अधिक हैं अर्थात् पद्मद्रह के परिवार की संख्या १,४०,११५ है। यहाँ चार देवांगनायें अधिक हैं। परिवार वृक्षों का प्रमाण मुख्य वृक्ष से आधा-आधा है।

शाल्मलीवृक्ष— इसी प्रकार सीतोदा नदी के पश्चिम तट में निषध कुलाचल के पास मेरु पर्वत से नैऋत्य दिशा में देवकुरु क्षेत्र में रजतमयी स्थल पर शाल्मलिवृक्ष है। इसका सारा वर्णन जंबूवृक्ष सदृश है। इसकी दक्षिण शाखा पर जिनमंदिर है शेष तीन शाखाओं पर वेणु और वेणुधारी देवों के भवन हैं। इसके परिवार वृक्ष भी पूर्वोक्त प्रमाण हैं।

१. लोकविभाग में प्रथम अध्याय की गाथा १३० में जंबूवृक्ष की प्रत्येक शाखा को ८ योजन (३२०००मील) लम्बी बताया है। २. तिलोयपण्णत्ति में पृ. ४१८ में जंबूवृक्ष का वर्णन उत्सेध (लघु) योजन से बताया है।

विशेष—जितने जंबूवृक्ष और शाल्मलिवृक्ष हैं। प्रत्येक की शाखाओं पर एक-एक जिनमंदिर होने से उतने ही जिनमंदिर हैं।

इस प्रकार से विदेहक्षेत्र के सुमेरु, गजदंत, वक्षारपर्वत, विभंगा नदी, बत्तीसदेश, विजयार्ध, वृषभाचल, गंगा-सिंधु आदि नदियाँ, यमकगिरि, नदी के मध्य के सरोवर, दिग्गज और जंबू-शाल्मलि वृक्षों का वर्णन किया गया है,जो कि नाममात्र से है।

रम्यक् क्षेत्र

नारी-नरकांता नदी

इस रम्यक् क्षेत्र का सारा वर्णन हरिक्षेत्र के सदृश है। यहाँ पर नील पर्वत के केसरी सरोवर के उत्तर तोरण द्वार से नरकांता नदी निकली है और रुक्मि पर्वत के महापुंडरीक सरोवर के दक्षिण तोरणद्वार से नारी नदी निकलती है। ये नदियाँ नारी-नरकांता कुंड में गिरती हैं। यहाँ के नाभिगिरि का नाम पद्मवान् है, इस पर पद्म नाम का व्यंतर देव रहता है।

हैरण्यवत क्षेत्र

सुवर्णकूला-रूप्यकूला नदी

इस हैरण्यवत क्षेत्र का सारा वर्णन हैमवत क्षेत्र के सदृश है। यहाँ पर रुक्मि पर्वत के महापुंडरीक सरोवर के उत्तर तोरणद्वार से रूप्यकूला नदी एवं शिखरी पर्वत के पुंडरीक सरोवर के दक्षिण तोरणद्वार से सुवर्णकूला नदी निकलती है। यहाँ पर नाभिगिरि का गंधवान् नाम है उस पर प्रभास नाम का देव रहता है।

ऐरावत क्षेत्र

रक्ता-रक्तोदा नदी

इस ऐरावत क्षेत्र का सारा वर्णन भरतक्षेत्र के सदृश है। इसमें बीच में विजयार्ध पर्वत है। उस पर नव कूट हैं—सिद्धकूट, उत्तरार्धऐरावत, तमिस्रगुह, माणिभद्र, विजयार्धकुमार, पूर्णभद्र, खंडप्रपात, दक्षिणार्ध ऐरावत और वैश्रवण। यहाँ पर शिखरी पर्वत के पुंडरीक सरोवर के पूर्व-पश्चिम तोरणद्वार से रक्ता-रक्तोदा नदियाँ निकलती हैं जो कि विजयार्ध की गुफा से निकलकर पूर्व-पश्चिम समुद्र में प्रवेश कर जाती हैं अतः यहाँ पर भी छह खंड हैं। उसमें भी मध्य का आर्यखंड है।

इस प्रकार संक्षेप से सात क्षेत्रों का वर्णन हुआ।

जंबूद्वीप का संक्षिप्त अवलोकन

तीन सौ ग्यारह पर्वत कहाँ हैं

सुमेरु पर्वत विदेह के मध्य में है। छह कुलाचल-सात क्षेत्रों की सीमा करते हैं। चार गजदंत मेरु की विदिशा में हैं। सोलह वक्षार विदेह क्षेत्र में हैं। बत्तीस विजयार्ध बत्तीस विदेह देश में हैं और दो विजयार्ध, भरत और ऐरावत में एक-एक हैं अतः चौंतीस विजयार्ध हैं। बत्तीस विदेह के ३२, भरत-ऐरावत के दो ऐसे चौंतीस वृषभाचल हैं। हैमवत, हरि तथा रम्यक और हैरण्यवत में एक-एक नाभिगिरि ऐसे चार नाभिगिरि हैं।सीता नदी के पूर्व-पश्चिम तट पर एक-एक ऐसे चार यमकगिरि हैं। देवकुरु-उत्तरकुरु में दो-दो तथा पूर्व-पश्चिम भद्रसाल में दो-दो ऐसे आठ दिग्गज पर्वत हैं। सीता-सीतोदा के बीच बीस सरोवरों में प्रत्येक सरोवर के दोनों तटों पर पाँच-पाँच होने से दो सौ कांचनगिरि हैं।

जंबूद्वीप की संपूर्ण नदियां कितनी हैं और कहाँ कहाँ हैं?

भरतक्षेत्र की गंगा-सिंधु २+ इनकी सहायक नदियां २८०००+हैमवतक्षेत्र की रोहित-रोहितास्या २+ इनकी सहायक नदियां ५६०००+ हरिक्षेत्र की हरित्-हरिकांता २+ इनकी सहायक १,१२०००+ विदेहक्षेत्र की सीता-सीतोदा २+ इनकी सहायक १,६८००० (८४०००×२) + विभंगा नदी १२ + इनकी सहायक ३,३६,००० (२८०००×१२) बत्तीस विदेह देशों की गंगा-सिंधु और रक्ता-रक्तोदा नाम की ६४+ इनकी सहायक नदियां ८९६००० (१४०००×६४)। रम्यकक्षेत्र की नारी-नरकांता २ + इनकी सहायक नदियां १,१२,०००+ हैरण्यवत क्षेत्र की सुवर्णकूला २+ इनकी सहायक ५६०००+ ऐरावत क्षेत्र की रक्ता-रक्तोदा २+ इनकी सहायक नदियां २८०००= १७,९२,०९०।

अर्थात् सम्पूर्ण जंबूद्वीप में सत्रह लाख, बानवे हजार, नब्बे नदियां हैं। इनमें विदेह की नदियां चौदह लाख, अठहत्तर हैं। सीता-सीतोदा की जो परिवार नदियाँ हैं, वे देवकुरु-उत्तरकुरु में ही बहती हैं। आगे पूर्वविदेह-पश्चिम विदेह में विभंगा तथा गंगा सिंधु और रक्ता-रक्तोदा हैं। जितनी परिवार नदियां हैं वे सभी अपने-अपने कुण्डों से उत्पन्न होती हैं।

चौंतीस कर्मभूमि

भरतक्षेत्र के आर्यखंड की एक कर्मभूमि, वैसे ही ऐरावत क्षेत्र के आर्यखंड की एक कर्मभूमि तथा बत्तीस विदेहों के आर्यखंड की ३२ कर्मभूमि ऐसे चौंतीस कर्मभूमि हैं।

इनमें से भरत-ऐरावत में षट्काल परिवर्तन होने से ये दो अशाश्वत कर्मभूमि हैं एवं विदेहों में सदा ही कर्मभूमि व्यवस्था होने से वे शाश्वत कर्मभूमि हैं।

छह भोगभूमि

हैमवत और हैरण्यवत में जघन्य भोगभूमि की व्यवस्था है। वहाँ पर मनुष्यों की शरीर की ऊँचाई एक कोस है, एक पल्य आयु है और युगल ही जन्म लेते हैं युगल ही मरते हैं। दस प्रकार के कल्पवृक्षों से भोग सामग्री प्राप्त करते हैं।

हरिवर्ष क्षेत्र और रम्यक क्षेत्र में मध्यम भोगभूमि की व्यवस्था है। वहाँ पर दो कोस ऊँचे, दो पल्य आयु वाले मनुष्य होते हैं। ये भी भोग सामग्री को कल्पवृक्षों से प्राप्त करते हैं।

देवकुरु-उत्तरकुरु क्षेत्र में उत्तम भोगभूमि की व्यवस्था है। यहाँ पर तीन कोस ऊंचे, तीन पल्य की आयु वाले मनुष्य होते हैं। ये छहों भोगभूमियां शाश्वत हैं,यहाँ पर परिवर्तन कभी नहीं होता है।

जंबूवृक्ष-शाल्मलिवृक्ष

उत्तरकुरु में ईशान दिशा में जंबूवृक्ष एवं देवकुरु में नैऋत्य दिशा में शाल्मलिवृक्ष हैं।

चौंतीस आर्यखंड

एक भरत में, एक ऐरावत में और बत्तीस विदेहदेशों में बत्तीस ऐसे आर्यखंड चौंतीस हैं।

एक सौ सत्तर म्लेच्छखंड

भरत क्षेत्र के पाँच, ऐरावत क्षेत्र के पाँच और बत्तीस विदेह के प्रत्येक के पाँच-पाँच ५+५+ (३२×५) =१७० म्लेच्छ खंड हैं।

वेदी और वनखंड

जंबूद्वीप में ३११ पर्वत हैं,उनके आजू-बाजू या चारों तरफ मणिमयी वेदियां हैं और वनखंड हैं।

नब्बे कुंड प्रमुख हैं—गंगादि १४ नदियां जहां गिरती हैं वहाँ के १४, विभंगा नदियों की उत्पत्ति के १२, विदेह की गंगादि-रक्तादि ६४ नदियों की उत्पत्ति के ६४ ऐसे १४+ १२+ ६४=९० कुंड हैं। इनके चारों तरफ उतनी ही वेदी और वनखंड हैं।

२६ सरोवर हैं—कुलाचल के ६ + सीता-सीतोदा के २०=२६। इनके चारों तरफ ही वनखंड हैं। जितनी नदियां हैं उनके दोनों पार्श्व भागों में अर्थात् १७९२०९०×२

=३५८४१८० मणिमयी वेदिका हैं और उतने ही वनखंड हैं।

इन वेदियों की ऊँचाई आधा योजन और विस्तार पाँच सौ धनुष प्रमाण है। सर्वत्र वनखंड आधा योजन चौड़े हैं।

जम्बूद्वीप में ५६८ कूट

उनका स्पष्टीकरण—

(१) हिमवान आदि छह कुलाचल के क्रमशः—

हिमवान	-शिखरी पर्वत के ११+११
महाहिमवान	-रुक्मी के ८+८
निषध	-नील के ९+९
	ये २२+१६+१८=५६ हैं।

(२) विदेह क्षेत्र के ३२ विजयार्ध एवं भरत-ऐरावत के २ ऐसे ३४ विजयार्ध पर्वत के ९-९ कूट ऐसे ३४×९=३०६ हैं।

(३) सोलह वक्षार पर्वत के ४-४ ऐसे १६×४=६४ हैं।

(४) चार गजदंत के क्रमशः-९+७+९+७ ऐसे ३२ हैं।

(५) सुमेरुपर्वत के नंदनवन व सौमनसवन में ९+९ ऐसे १८ हैं।

(६) गंगा-सिंधु आदि चौदह नदियों के नीचे गिरने के स्थान पर १४ कूट हैं, जिन पर गंगा आदि देवियों के महल की छत पर जटाजूट सहित अकृत्रिम जिनप्रतिमाएँ हैं, उन पर ही ये गंगा आदि नदियाँ अभिषेक करते हुए जैसी गिरती हैं। ऐसे गंगा आदि १४ नदियों के १४ हैं।

(७) हिमवान आदि छह पर्वतों के ऊपर पद्म, महापद्म आदि छह सरोवरों में १३-१३ कूट हैं। ऐसे ६×१३=७८ हैं। (देखें-तिलोयपण्णत्ति ग्रंथ)

ये सब कुल मिलाकर ५६+३०६+६४+३२+१८+१४+७८=५६८ कूट होते हैं।

विशेष—इनमें से छह कुलाचलों के एक-एक सिद्धकूट, चार गजदंत के एक-एक सिद्धकूट, सोलह वक्षार के एक-एक सिद्धकूट और चौंतीस विजयार्ध के एक-एक सिद्धकूट ऐसे-६+४+१६+३४=६० ऐसे सिद्धकूटों पर जम्बूद्वीप के ७८ जिनमंदिर में से ६० जिनमंदिर हैं। शेष सभी कूटों पर देवभवनों में जिनमंदिर हैं उनकी गणना व्यंतर देवों के मंदिरों में होती है। इन्हीं ६० जिनमंदिरों में सुमेरु के १६ एवं जम्बूवृक्ष-शाल्मली वृक्ष के २ मिलाने से ७८ अकृत्रिम जिनमंदिर जम्बूद्वीप के होते हैं।

जंबूद्वीप के अठहत्तर जिनचैत्यालय

सुमेरु के चार वन संबंधी १६ + छह कुलाचल के ६ + चार गजदंत के ४+ सोलह वक्षार के १६+ चौंतीस विजयार्ध के ३४ +जंबू शाल्मलि वृक्ष के २ =७८। ये जंबूद्वीप के अठहत्तर चैत्यालय हैं। इनमें प्रत्येक में १०८-१०८ जिनप्रतिमायें विराजमान हैं उनको मेरा मन, वचन, काय से नमस्कार होवे।

इस जंबूद्वीप में हम कहाँ हैं ?

यह भरतक्षेत्र, जंबूद्वीप के १९० वें भाग (५२६-६/१९) योजन प्रमाण है। इसके छह खंड में जो आर्यखंड है उसका प्रमाण लगभग निम्न प्रकार है।

दक्षिण का भरतक्षेत्र २३८-३/१९ योजन का है। पद्मसरोवर की लम्बाई १००० योजन है तथा गंगा-सिंधु नदियां ५-५ सौ योजन पर्वत पर पूर्व-पश्चिम बहकर दक्षिण में मुड़ती हैं। यह आर्यखंड उत्तर-दक्षिण २३८ योजन चौड़ा है। पूर्व-पश्चिम में १०००+ ५००+५००=२०००योजन लम्बा है। इनको आपस में गुणा करने से २३८×२००० = ४,७६,००० योजन प्रमाण आर्यखंड का क्षेत्रफल हो जाता है। इसके मील बनाने से ४,७६,०००×४०००=१९०,४०,००,००० (एक सौ नब्बे करोड़ चालीस लाख) मील प्रमाण क्षेत्रफल हो जाता है।

इस आर्यखण्ड के मध्य में अयोध्या नगरी है। इस अयोध्या के दक्षिण में ११९ योजन की दूरी पर लवण समुद्र की वेदी है और उत्तर की तरफ इतनी ही दूर पर विजयार्ध पर्वत की वेदिका है। अयोध्या से पूर्व में १००० योजन की दूरी पर गंगानदी की तटवेदी है अर्थात् आर्यखंड की दक्षिण दिशा में लवण समुद्र, उत्तर दिशा में विजयार्ध, पूर्व दिशा में गंगा नदी एवं पश्चिम दिशा में सिंधु नदी है ये चारों आर्यखण्ड की सीमारूप हैं।

अयोध्या से दक्षिण में ४,७६,००० मील (चार लाख छियत्तर हजार मील) जाने से लवण समुद्र है और उत्तर में, ४,७६,००० मील जाने से विजयार्ध पर्वत है। उसी प्रकार अयोध्या से पूर्व में ४०,००००० (चालीस लाख) मील दूर गंगानदी तथा पश्चिम में इतनी ही दूर पर सिंधु नदी है।

आज का सारा विश्व इस आर्यखंड में है। हम और आप सभी इस आर्यखंड में ही भारतवर्ष में रहते हैं।

षट्काल परिवर्तन

काल के दो भेद हैं — अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी। अवसर्पिणी के छह भेद हैं। सुषमासुषमा, सुषमा, सुषुमादुषमा, दुषमा सुषमा, दुषमा और दुषमा दुषमा। प्रथम काल चार कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण है, द्वितीय काल तीन कोड़ाकोड़ी सागर, तृतीय काल दो

कोड़ाकोड़ी सागर, चतुर्थ काल बयालीस हजार वर्ष कम एक कोड़ाकोड़ी सागर, पंचम काल इक्कीस हजार वर्ष का एवं छठा काल इक्कीस हजार वर्ष प्रमाण है।

ऐसे उत्सर्पिणी के दुषुमा-दुषुमा से लेकर छह भेद हैं। उनमें छठे से पहले तक परिवर्तन चलता है। अवसर्पिणी में आयु, शरीर की ऊँचाई आदि का ह्रास होता है और उत्सर्पिणी में आयु, शरीर की ऊँचाई, सुख आदि की वृद्धि होती जाती है।

जब पहले इस भरतक्षेत्र के आर्यखंड में सुषमा-सुषमा काल चल रहा था तब वहाँ के मनुष्यों के शरीर की ऊँचाई तीन कोस की थी और आयु तीन पल्य की थी, वे स्वर्ण सदृश वर्ण के थे। वे तीन दिन बाद कल्पवृक्षों से प्राप्त बदरीफल बराबर उत्तम भोजन ग्रहण करते थे। उनके मल-मूत्र, पसीना, रोग, अपमृत्यु आदि बाधायें नहीं थीं। वहाँ की स्त्रियां आयु के नव महीने शेष रहने पर गर्भ धारण करती थीं और युगल पुत्र-पुत्री को जन्म देती थीं। संतान के जन्म होते ही पुरुष को जंभाई और स्त्री को छींक आने से वे मर जाते थे। ये युगल वृद्धि को प्राप्त होकर कल्पवृक्षों से उत्तम सुख का अनुभव करते रहते थे।

दस प्रकार के कल्पवृक्ष — पानांग, तूर्यांग, भूषणांग, मालांग, ज्योतिरांग, दीपांग, गृहांग, भोजनांग, पात्रांग और वस्त्रांग। ये उत्तम वृक्ष अपने नाम के अनुसार ही उत्तम वस्तुयें मांगने पर देते हैं। इसे उत्तम भोगभूमि कहते हैं।धीरे-धीरे आयु आदि घटते-घटते प्रथम काल समाप्त होकर दूसरा काल प्रवेश करता है। तब मनुष्यों की आयु दो पल्य, शरीर की ऊँचाई दो कोस और शरीर का वर्ण चन्द्रमा के समान रहता है। ये लोग दो दिन बाद कल्पवृक्षों से प्राप्त हुए बहेड़े के बराबर भोजन को ग्रहण करते हैं। इसे मध्यम भोगभूमि कहते हैं। द्वितीय काल पूर्ण हो जाने के बाद तृतीय काल प्रवेश करता है तब यहाँ के मनुष्यों की आयु एक पल्य, ऊँचाई एक कोस और शरीर का वर्ण हरित रहता है। ये एक दिन के अन्तर से आंवले के बराबर भोजन ग्रहण करते हैं। आगे क्रम से आयु आदि घटती जाती है इस प्रकार यह भोगभूमि का काल चल रहा था।

जब तृतीय काल में पल्य का आठवां भाग शेष रह गया तब ज्योतिरांग कल्पवृक्षों का प्रकाश मंद पड़ने से आकाश में सतत घूमने वाले सूर्य,चन्द्र दिखने लगे। उस समय प्रजा के डरने से 'प्रतिश्रुति' नाम के प्रथम कुलकर ने उनको वास्तविक स्थिति बताकर उनका डर दूर किया। ऐसे ही क्रम से तेरह कुलकर और हुए। अन्तिम कुलकर महाराज नाभिराज थे। उनकी पत्नी मरुदेवी युगलिया जन्म न लेकर किसी प्रधान कुल की कन्या थीं। उन दोनों का विवाह इन्द्रों ने बड़े उत्सव से कराया था।

पुनः चतुर्थ काल में जब चौरासी लाख पूर्व वर्ष, तीन वर्ष साढ़े आठ माह काल

बाकी था तब अन्तिम कुलकर नाभिराज की रानी मरुदेवी के गर्भ में भगवान वृषभदेव आए और नव महिने बाद जन्म लिया। ये प्रथम तीर्थंकर थे। इनकी आयु चौरासी लाख वर्ष पूर्व की थी । इन्होंने कल्पवृक्ष के नष्ट हो जाने के बाद प्रजा को असि, मषि, कृषि, वाणिज्य, शिल्प और विद्या इन षट्क्रियाओं से आजीविका करना बतलाया। क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र ये तीन वर्ण स्थापित किये। भगवान ने विदेहक्षेत्र की स्थिति को अपने अवधिज्ञान से जानकर यह सब व्यवस्था बनाई। भगवान की आज्ञा से इन्द्र ने कौशल, काशी आदि देश, अयोध्या, हस्तिनापुर, उज्जयिनी आदि नगरियों की रचना की। इस काल में मनुष्यों की उत्कृष्ट आयु एक पूर्वकोटि और शरीर पाँच सौ धनुष का ऊँचा होता था।

भगवान ने अपनी पुत्रियों को ब्राह्मी लिपि और अंक लिपि सिखाई। पुत्र-पुत्रियों को सम्पूर्ण विद्याओं में निष्णात किया। अनन्तर दीक्षा लेकर मोक्षमार्ग को प्रगट किया। पुनः केवलज्ञान होने के बाद साक्षात् संपूर्ण जगत को जान लिया और अन्त में चतुर्थकाल के तीन वर्ष, आठ माह, एक पक्ष शेष रहने पर कार्तिक कृष्णा अमावस्या के उषाकाल में पावापुरी से मोक्ष गये हैं।

उसके बाद दुषमा नामक पंचमकाल आ गया। इसमें मनुष्यों की उत्कृष्ट आयु १२० वर्ष और शरीर की ऊँचाई अधिक से अधिक सात हाथ की है। दिन पर दिन आयु आदि घट रहे हैं। महावीर स्वामी को हुये अब तक लगभग ढाई हजार वर्ष व्यतीत हो गये हैं। हम लोग इस पंचमकाल के मनुष्य हैं।

आगे साढ़े अठारह हजार वर्ष तक भगवान महावीर का शासन चलता रहेगा, अनन्तर एक राजा दिगंबर मुनि से प्रथम ग्रास को शुल्करूप में मांगेगा तब मुनि अन्तराय करके जाकर आर्यिका, श्रावक, श्राविकारूप चतुर्विध संघ सहित सल्लेखना ग्रहण कर मरकर स्वर्ग जाएंगे। उस समय धरणेन्द्र कुपित हो राजा को मार देगा, तब राजा नरक जाएंगे। बस! धर्म का और राजा का अंत हो जाएगा।

अनंतर छठा काल आएगा, उस समय मनुष्यों का शरीर एक हाथ का, आयु सोलह वर्ष की मात्र रह जाएगी। ये मनुष्य पशुवृत्ति करेंगे। मांसाहारी होंगे, जंगलों में घूमेंगे, दुःखी, दरिद्री, रोगी, कुटुंबहीन होंगे। पुनः उनचास दिन के प्रलय के बाद इक्कीस हजार वर्ष व्यतीत हो जाने पर छठा काल समाप्त होगा और देव-विद्याधरों द्वारा रक्षा किये गये कुछ मनुष्य जीवित रहकर पुनः सृष्टि की परम्परा बढ़ाएंगे।

उत्सर्पिणी के छठे काल के बाद धीरे-धीरे पंचम आदि काल आते रहेंगे। यह काल परिवर्तन परम्परा अनादि है। जैनधर्म अनादि है यह सार्वधर्म है—सभी जीवों का हित करने वाला है। सभी तीर्थंकर इस धर्म का उपदेश देते हैं, वे स्वयं इस धर्म के प्रवर्तक

नहीं हैं। ऐसे अनंतों तीर्थंकर हो चुके हैं और भविष्य में होते रहेंगे। कोई भी जीव अपने आप धर्म पुरुषार्थ के बल से अपने आपको तीर्थंकर भगवान बना सकता है, ऐसा समझना।

यह षट्काल परिवर्तन भरत, ऐरावत के आर्यखंडों में ही होता है अन्यत्र नहीं है।

प्रध्वस्तघातिकर्माणः, केवलज्ञानभास्कराः।
कुर्वंतु जगतां शांतिं, वृषभाद्या जिनेश्वराः।।

लवण समुद्र का वर्णन

लवणसमुद्र जंबूद्वीप को चारों ओर से घेरे हुए खाई के सदृश गोल है, इसका विस्तार दो लाख योजन प्रमाण है। एक नाव के ऊपर अधोमुखी दूसरी नाव के रखने से जैसा आकार होता है उसी प्रकार वह समुद्र चारों ओर आकाश में मण्डलाकार से स्थित है। उस समुद्र का विस्तार ऊपर दस हजार योजन और चित्रा पृथ्वी के समभाग में दो लाख योजन है। समुद्र के नीचे दोनों तटों में से प्रत्येक तट से पंचानवे हजार योजन प्रवेश करने पर दोनों और से एक हजार योजन की गहराई में तल विस्तार दस हजार योजन मात्र है।

समभूमि से आकाश में इसकी जलशिखा है,यह अमावस्या के दिन समभूमि से ११००० योजन प्रमाण ऊंची रहती है। वह शुक्ल पक्ष में प्रतिदिन क्रमशः वृद्धि को प्राप्त होकर पूर्णिमा के दिन १६००० योजन प्रमाण ऊंची हो जाती है। इस प्रकार जल के विस्तार में १६००० योजन की ऊँचाई पर दोनों ओर समान रूप से १,९०,००० योजन की हानि हो गई है। यहाँ प्रतियोजन की ऊँचाई पर होने वाली वृद्धि का प्रमाण ११-७/८ योजन प्रमाण है।

गहराई की अपेक्षा रत्नवेदिका से ९५ प्रदेश आगे जाकर एक प्रदेश की गहराई है, ऐसे ९५ अंगुल जाकर एक अंगुल, ९५ हाथ जाकर एक हाथ, ९५ कोस जाकर एक कोस एवं ९५ योजन जाकर एक योजन की गहराई हो गई है। इसी प्रकार से ९५ हजार योजन जाकर १००० योजन की गहराई हो गई अर्थात् लवण समुद्र के समजल भाग से समुद्र का जल एक योजन नीचे जाने पर एक तरफ से विस्तार में ९५ योजन हानिरूप हुआ है। इसी क्रम से एक प्रदेश नीचे जाकर प्रदेशों की, एक अंगुल नीचे जाकर ९५ अंगुलों की, एक हाथ नीचे जाकर ९५ हाथों की भी हानि समझ लेना चाहिये।

अमावस्या के दिन उक्त जलशिखा की ऊँचाई ११००० योजन होती है। पूर्णिमा के दिन वह उससे ५००० योजन बढ़ जाती है अतः ५००० के १५ वें भाग प्रमाण क्रमशः प्रतिदिन ऊँचाई में वृद्धि होती है।

१६०००-११०००/१५ =५०००/१५, ५०००/१५=३३३, १/३ योजन-तीन सौ

तेतीस से कुछ अधिक प्रमाण प्रतिदिन वृद्धि होती है।

समुद्र के मध्य में पाताल—लवण समुद्र के मध्य भाग में चारों ओर उत्कृष्ट, मध्यम और जघन्य ऐसे १००८ पाताल हैं। ज्येष्ठ पाताल ४, मध्यम ४ और जघन्य १००० हैं। उत्कृष्ट पाताल चार दिशाओं में चार हैं, मध्यम पाताल ४ विदिशाओं में ४ एवं उत्कृष्ट मध्यम के मध्य में ८ अन्तर दिशाओं में १००० जघन्य पाताल हैं।

४ उत्कृष्ट पाताल—उस समुद्र के मध्य भाग में पूर्वादि दिशाओं के क्रम से पाताल, कदम्बक, वड़वामुख और यूपकेसर नामक चार पाताल हैं। इन पातालों का विस्तार मूल में और मुख में १००० योजन प्रमाण है। इनकी गहराई, ऊँचाई और मध्यविस्तार मूल विस्तार से दस गुणा—१००००० योजन प्रमाण है। पातालों की वज्रमय भित्तिका ५०० योजन मोटी है। ये पाताल जिनेन्द्र भगवान द्वारा अरंजन-घट विशेष के समान कहे गये हैं। पाताल के उपरिम त्रिभाग में सदा जल रहता है, उनके मूल के त्रिभाग में घनी वायु और मध्य त्रिभाग में क्रम से जल, वायु दोनों रहते हैं। सभी पातालों के पवन सर्वकाल शुक्ल पक्षों में स्वभाव से बढ़ते हैं एवं कृष्ण पक्ष में स्वभाव से घटते हैं। शुक्ल पक्ष में पूर्णिमा तक प्रतिदिन २२२२-२/९ योजन पवन की वृद्धि हुआ करती है। पूर्णिमा के दिन पातालों के अपने-अपने तीन भागों में से नीचे के दो भागों में वायु और ऊपर के तृतीय भाग में केवल जल रहता है। अमावस्या के दिन अपने-अपने तीन भागों में से क्रमशः ऊपर के दो भागों में जल और नीचे के तीसरे भाग में केवल वायु स्थित रहता है। पातालों के अन्त में अपने-अपने मुख विस्तार को ५ से गुणा करने पर जो प्राप्त हो, उतने प्रमाण आकाश में अपने-अपने पार्श्व भागों में जलकण जाते हैं। ''**तत्त्वार्थराजवार्तिक**'' ग्रंथ में जलवृद्धि का कारण किन्नरियों का नृत्य बतलाया है। यथा—'' **रत्नप्रभाखरपृथ्वी-भाग सन्नि-वेशिभवनालयवातकुमारतद्वनिताक्रीडा-जनितानिलसंक्षोभकृतपातालोन्मीलननिमीलनहेतुकौ वायुतोयनिष्क्रमप्रवेशौ भवतः। तत्कृता दशयोजनसहस्त्रविस्तारमुखजलस्योपरि पंचाशद्योजनावधृता जलवृद्धिः। तत उभयत आरत्नवेदिकायाः सर्वत्र द्विगव्यूतिप्रमाणा जलवृद्धिः। पातालोन्मीलन-वेगोपशमेन हानिः।**

अर्थ—रत्नप्रभा पृथ्वी के खरभाग में रहने वाली वातकुमार देवियों की क्रीडा से क्षुब्ध वायु के कारण ५०० योजन जल की वृद्धि होती है अर्थात् वायु और जल का निष्क्रम और प्रवेश होता है और दोनों तरफ रत्नवेदिका पर्यन्त सर्वत्र दो गव्यूति प्रमाण जलवृद्धि होती है। पाताल के उन्मीलन के वेग की शांति से जल की हानि होती है। इन पातालों का तीसरा भाग १००००० /३=३३३३३-१/३ योजन प्रमाण है।

ज्येष्ठ पाताल सीमंत बिल के उपरिम भाग से संलग्न हैं अर्थात् ये पाताल भी मृदंग के आकार के गोल हैं, समभूमि से नीचे की गहराई का जो प्रमाण है वह इन पातालों की ऊँचाई है। यदि प्रश्न यह होवे कि एक लाख योजन तक इनकी गहराई समतल से नीचे कैसे होगी ? तो उसका समाधान यह है कि रत्नप्रभा पृथ्वी एक लाख अस्सी हजार योजन मोटी है, वहाँ खरभाग, पंकभाग पर्यन्त ये पाताल पहुँचे हुए ऊँचे गहरे हैं।

४ मध्यम पाताल—विदिशाओं में भी इनके समान चार पाताल हैं, उनका मुख विस्तार और मूल विस्तार १००० योजन तथा मध्य में और ऊँचाई, गहराई में १०,००० योजन है, इनकी वज्रमय भित्ति ५० योजन प्रमाण है। इन पातालों के उपरिम तृतीय भाग में जल, नीचे के तृतीय भाग में वायु, मध्य के तृतीय भाग में जल, वायु दोनों रहते हैं। पातालों की गहराई-ऊँचाई १०,००० योजन है, १०,०००/३=३३३३-१/३ पातालों का तृतीय भाग तीन हजार तीस सौ तेतीस से कुछ अधिक है। इनमें प्रतिदिन होने वाली जलवायु की हानि-वृद्धि का प्रमाण २२२-२/९ योजन प्रमाण है।

१००० जघन्य पाताल—उत्तम, मध्यम पातालों के मध्य में आठ अन्तर दिशाओं में एक हजार जघन्य पाताल हैं। मध्यम पाातालों की अपेक्षा दसवें भाग मात्र है अर्थात् मुख और मूल में ये पाताल १०० योजन हैं। मध्य में चौड़े और गहरे १००० योजन प्रमाण हैं। इनमें भी उपरिम त्रिभाग में जल, नीचे में वायु और मध्य में जलवायु दोनों हैं। इनका त्रिभाग ३३३-१/३ योजन है और प्रतिदिन जलवायु की हानि-वृद्धि २२-२/९ योजन मात्र है।

नागकुमार देवों के १,४२,००० नगर—लवणसमुद्र के बाह्य भाग में ७२०००, शिखर पर २८००० और अभ्यन्तर भाग में ४२००० नगर अवस्थित हैं। समुद्र के अभ्यन्तर भाग की वेला की रक्षा करने वाले वेलंधर नागकुमार देवों के नगर ४२००० हैं। जलशिखा को धारण करने वाले नागकुमार देवों के २८००० नगर हैं एवं समुद्र के बाह्य भाग की रक्षा करने वाले नागकुमार देवों के ७२००० नगर हैं।

ये नगर दोनों तटों से ७०० योजन जाकर तथा शिविर से ७००-१/२ योजन जाकर आकाश तल में स्थित हैं। इनका विस्तार १०,००० योजन प्रमाण है। नगरियों के तट उत्तम रत्नों से निर्मित समान गोल हैं। प्रत्येक नगरियों में ध्वजाओं, तोरणों से सहित दिव्य तट वेदियाँ हैं। उन नगरियों में उत्तम वैभव से सहित वेलंधर और भुजग देवों के प्रासाद स्थित हैं। जिनमंदिरों से रमणीय, वापी, उपवनों से सहित इन नगरियों का वर्णन बहुत ही सुन्दर है, ये नगरियाँ अनादिनिधन हैं।

उत्कृष्ट पाताल के आसपास के ८ पर्वत—समुद्र के दोनों किनारों में बयालीस हजार योजन प्रमाण प्रवेश करके पातालों के पार्श्व भागों में आठ पर्वत हैं। (ऊपर) तट

से ४२००० योजन आगे समुद्र में जाकर "पाताल" के पश्चिम दिशा में कौस्तुभ और पूर्व दिशा में कौस्तुभास नाम के दो पर्वत हैं। ये दोनों पर्वत रजतमय,धवल, १००० योजन ऊँचे, अर्धघट के समान आकार वाले वज्रमय मूल भाग से सहित, नाना रत्नमय अग्रभाग से सुशोभित हैं। प्रत्येक पर्वत का तिरछा विस्तार एक लाख सोलह हजार योजन है। इस प्रकार से जगती से पर्वतों तक तथा पर्वतों का विस्तार मिलाकर दो लाख योजन होता है। पर्वत का विस्तार १,१६०००। जगती से पर्वत का अंतराल ४२०००+ ४२००० = ८४००० । १,१६००० + ८४००० = २,००००० ।

ये पर्वत मध्य में रजतमय हैं, इनके ऊपर इन्हीं के नाम वाले कौस्तुभ ,कौस्तुभास देव रहते हैं। इनकी आयु, अवगाहना आदि विजयदेव के समान है। कदंब पाताल की उत्तर दिशा में उदक नामक पर्वत और दक्षिण दिशा में उदकाभास नामक पर्वत हैं। ये दोनों पर्वत नीलमणि जैसे वर्ण वाले हैं। इन पर्वतों के ऊपर क्रम से शिव और शिवदेव निवास करते हैं। इनकी आयु आदि कौस्तुभदेव के समान है।

बड़वामुख पाताल की पूर्व दिशा में शंख और पश्चिम दिशा में महाशंख नामक पर्वत हैं। ये दोनों ही शंख के समान वर्ण वाले हैं। इन पर उदक, उदकावास देव स्थित हैं, इनका वर्णन पूर्वोक्त सदृश है। यूपकेसरी के दक्षिण भाग में दक नामक पर्वत और उत्तरभाग में दकवास नामक पर्वत हैं। ये दोनों पर्वत वैडूर्यमणिमय हैं। इनके ऊपर क्रम से लोहित, लोहितांक देव रहते हैं।

८ सूर्यद्वीप हैं— जंबूद्वीप की जगती से बयालीस हजार योजन जाकर "सूर्यद्वीप" नाम से प्रसिद्ध आठ द्वीप हैं। ये द्वीप पूर्व में कहे हुए कौस्तुभ आदि पर्वतों के दोनों पार्श्वभागों में स्थित होकर निकले हुए मणिमय दीपकों से युक्त शोभायमान हैं। त्रिलोकसार में १६ "चन्द्रद्वीप" भी माने गये हैं। यथा—अभ्यन्तर तट और बाह्य तट दोनों से ४२००० योजन छोड़कर चारों विदिशाओं के दोनों पार्श्वभागों में दो-दो, ऐसे आठ "सूर्यद्वीप" हैं। और दिशा-विदिशा के बीच में जो आठ अन्तरदिशायें हैं, उनके दोनों पार्श्व भागों में दो-दो, ऐसे १६ "चन्द्रद्वीप" नामक द्वीप हैं। ये सब द्वीप ४२००० योजन व्यास वाले और गोल आकार वाले हैं। यहाँ द्वीप से "टापू" को समझना।

समुद्र में गौतम द्वीप का वर्णन— लवण समुद्र के अभ्यन्तर तट से १२००० योजन आगे जाकर १२००० योजन ऊँचा एवं इतने ही प्रमाण व्यास वाला, गोलाकार गौतम नामक द्वीप है जो कि समुद्र में "वायव्य" विदिशा में है। ये उपर्युक्त सभी द्वीप वन, उपवन, वेदिकाओं से रम्य हैं और "जिनमंदिर" से सहित हैं। उन द्वीपों के स्वामी वेलंधर जाति के नागकुमार देव हैं। वे अपने-अपने द्वीप के समान नाम के धारक हैं।

मागधद्वीप आदि का वर्णन— भरतक्षेत्र के पास समुद्र के दक्षिण तट से संख्यात योजन जाकर आगे मागध, वरतनु और प्रभास नाम के तीन द्वीप हैं अर्थात् गंगा नदी के तोरणद्वार से आगे कितने ही योजन प्रमाण समुद्र में जाने पर "मागध" द्वीप है। जंबूद्वीप के दक्षिण वैजयंत द्वार से कितने ही योजन समुद्र में जाने पर "वरतनु" द्वीप है एवं सिंधु नदी के तोरण से कितने ही योजन जाकर "प्रभास" द्वीप है। इन द्वीपों में इन्हीं नाम के देव रहते हैं। इन देवों को भरतक्षेत्र के चक्रवर्ती वश में करते हैं।

ऐसे ही ऐरावत क्षेत्र के उत्तर भाग में रक्तोदा नदी के पार्श्व भाग में समुद्र के अन्दर "मागध" द्वीप, अपराजित द्वार से आगे "वरतनु" द्वीप एवं रक्ता नदी के आगे कुछ दूर जाकर "प्रभास" द्वीप है जो कि ऐरावत क्षेत्र के चक्रवर्तियों के द्वारा जीते जाते हैं।

४८ कुमानुषद्वीप— लवणसमुद्र में कुमानुषों के ४८ द्वीप हैं। इनमें से २४ द्वीप तो अभ्यन्तर भाग में एवं २४ द्वीप बाह्यभाग में स्थित हैं। जंबूद्वीप की जगती से ५००० योजन आगे जाकर ४ द्वीप चारों दिशाओं में और इतने ही योजन जाकर चार द्वीप चारों विदिशाओं में हैं। जंबूद्वीप की जगती से ५५० योजन आगे जाकर दिशा, विदिशा की अन्तर दिशाओं में ८ द्वीप हैं। हिमवन्, विजयार्ध पर्वत के दोनों किनारों में जगती से ६००० योजन जाकर ४ द्वीप एवं उत्तर में शिखरी और विजयार्ध के दोनों पार्श्व भागों से ६०० योजन अन्तर समुद्र में जाकर ४ द्वीप हैं।

दिशागत द्वीप १०० योजन प्रमाण विस्तार वाले हैं, ऐसे ही विदिशागत द्वीप ५५ योजन विस्तृत, अन्तरदिशागत द्वीप ५० योजन विस्तृत एवं पर्वत के पार्श्वगत द्वीप २५ योजन विस्तृत हैं।

ये सब उत्तम द्वीप वनखंड, तालाबों से रमणीय, फल फूलों के भार से संयुक्त तथा मधुर रस एवं जल से परिपूर्ण हैं। यहाँ कुभोगभूमि की व्यवस्था है। यहाँ पर जन्म लेने वाले मनुष्य "कुमानुष" कहलाते हैं और विकृत आकार वाले होते हैं। पूर्वादिक दिशाओं में स्थित चार द्वीपों के कुमानुष क्रम से एक जंघा वाले, पूँछ वाले, सींग वाले और गूंगे होते हैं। आग्नेय आदि विदिशाओं के कुमानुष क्रमशः शष्कुलीकर्ण, कर्णप्रावरण, लम्बकर्ण और शशकर्ण होते हैं। अन्तर दिशाओं में स्थित आठ द्वीपों के वे कुमानुष क्रम से सिंह, अश्व, श्वान, महिष, वराह, शार्दूल, घूक और बंदर के समान मुख वाले होते हैं। हिमवान् पर्वत के पूर्व-पश्चिम किनारों में क्रम से मत्स्यमुख, कालमुख तथा दक्षिण विजयार्ध के किनारों में मेषमुख, गोमुख कुमानुष होते हैं। शिखरी पर्वत के पूर्व पश्चिम किनारों पर क्रम से मेघमुख, विद्युन्मुख तथा उत्तर विजयार्ध के किनारों पर आदर्शमुख, हस्तिमुख कुमानुष होते हैं। इन सबमें से एकोरुक कुमानुष गुफाओं में होते हैं और मिष्ट मिट्टी को

खाते हैं। शेष कुमानुष वृक्षों के नीचे रहकर फल फूलों से जीवन व्यतीत करते हैं।

इस प्रकार से दिशागत द्वीप ४, विदिशागत ४, अन्तर दिशागत ८, पर्वत तटगत ८। ४+४+८+८=२४ अंतर्द्वीप हुए हैं, ऐसे ही लवण समुद्र के बाह्य भाग के भी २४ द्वीप मिलकर २४+२४+=४८ अन्तर्द्वीप लवण समुद्र में हैं।

कुभोगभूमि में जन्म लेने के कारण—मिथ्यात्व में रत, मन्दकषायी, मिथ्यादेवों की भक्ति में तत्पर, विषम पंचाग्नि तप तपने वाले, सम्यक्त्व रत्न से रहित जीव मरकर कुमानुष होते हैं। जो लोग तीव्र अभिमान से गर्वित होकर सम्यक्त्व और तप से युक्त साधुओं का किंचित् अपमान करते हैं, जो दिगंबर साधु की निंदा करते हैं, ऋद्धि रस आदि गौरव से युक्त होकर दोषों की आलोचना गुरु के पास नहीं करते हैं, गुरुओं के साथ स्वाध्याय वंदना कर्म नहीं करते हैं, जो मुनि एकाकी विचरण करते हैं, क्रोध कलह से सहित हैं, अरहंत गुरु आदि की भक्ति से रहित, चतुर्विध संघ में वात्सल्य से रहित, मौन बिना भोजन करने वाले हैं, जो पाप में संलग्न हैं वे मृत्यु को प्राप्त होकर विषम परिपाक वाले, पाप कर्मों के फल से इन द्वीपों में कुत्सित रूप से युक्त कुमानुष उत्पन्न होते हैं। त्रिलोकसार में भी यह कहा है—

दुब्भावअसूचिसूदकपुप्फवई-जाइसंकरादीहिं।
कयदाणा वि कुवत्ते जीवा कुणरेसु जायंते।।९२४।।

अर्थ—खोटे भाव से सहित, अपवित्र, मृतादि के सूतक पातक से सहित, रजस्वला स्त्री के संसर्ग से सहित, जातिसंकर आदि दोषों से दूषित मनुष्य जो दान करते हैं और जो कुपात्रों में दान देते हैं ये जीव कुमानुष में उत्पन्न होते हैं क्योंकि ये जीव मिथ्यात्व और पाप से रहित किंचित् पुण्य उपार्जन करते हैं अतः कुत्सित भोगभूमि में जन्म लेते हैं। इनकी आयु एक पल्य प्रमाण रहती है। एक कोस ऊँचे शरीर वाले हैं युगलियाँ होते हैं। मरकर नियम से भवनत्रिक देवों में जन्म लेते हैं। कदाचित् सम्यक्त्व को प्राप्त करके ये कुमानुष सौधर्म युगल में जन्म लेते हैं।

लवण समुद्र के दोनों ओर तट हैं। लवणसमुद्र में ही पाताल है अन्य समुद्रों में नहीं है। लवण समुद्र के जल की गहराई और ऊँचाई में हीनाधिकता है अन्य समुद्रों के जल में नहीं है। सभी समुद्रों के जल की गहराई सर्वत्र हजार योजन है और ऊपर में जल समतल प्रमाण है। लवणसमुद्र का जल खारा है। लवणसमुद्र में जलचर जीव पाये जाते हैं, लवणसमुद्र के मत्स्य नदी के गिरने के स्थान पर ९ योजन अवगाहना वाले एवं मध्य में १८ योजन प्रमाण हैं। इसमें कछुआ, शिंशमार, मगर आदि जलजंतु भरे हैं। पद्मपुराण में रावण की लंका को लवणसमुद्र में माना है अतः इस समुद्र में और भी

अनेकों द्वीप हैं जैसा कि पद्मपुराण से स्पष्ट है।

यथा—अस्त्यत्र लवणांभोधौ क्रूरग्राहसमाकुलैः।
प्रख्यातो राक्षसद्वीपः प्रभूताद्भूतसंकुलः।।१०६।।
शतानिसप्त.....१०७ से ११० तक पद्म पुराण, ४८ पर्व।

अर्थ—दुष्ट मगरमच्छों से भरे हुए इस लवणसमुद्र में अनेक आश्चर्यकारी स्थानों से युक्त प्रसिद्ध "राक्षसद्वीप" है, जो सब ओर सात योजन विस्तृत है तथा कुछ अधिक इक्कीस योजन उसकी परिधि है। उसके बीच में सुमेरु पर्वत के समान त्रिकूट नाम का पर्वत है जो नौ योजन ऊँचा और ५० योजन चौड़ा है, सुवर्ण तथा नाना प्रकार की मणियों से देदीप्यमान एवं शिलाओं के समूह से व्याप्त है। राक्षसों के इन्द्र भीम ने मेघवाहन के लिये वह दिया था। तट पर उत्पन्न हुए नाना प्रकार के चित्र-विचित्र वृक्षों से सुशोभित उस त्रिकूटाचल के शिखर पर लंका नाम की नगरी है जो मणि और रत्नों की किरणों तथा स्वर्ण के विमानों के समान मनोहर महलों से एवं क्रीडा आदि के योग्य सुन्दर प्रदेशों से अत्यंत शोभायमान है। जो सब ओर से तीस योजन चौड़ी है तथा बहुत बड़े प्राकार और परिखा से युक्त होने के कारण दूसरी पृथ्वी के समान जान पड़ती है।

लंका के समीप में और भी ऐसे स्वाभाविक प्रदेश हैं जो रत्न, मणि तथा सुवर्ण से निर्मित हैं। वे सब प्रदेश उत्तमोत्तम नगरों से युक्त हैं, राक्षसों की क्रीडाभूमि हैं तथा महाभोगों से युक्त विद्याधरों से सहित हैं। संध्याकार सुबेल, कांचन, ह्लादन, योधन, हंस, हरिसागर और अर्धस्वर्ग आदि अन्य द्वीप भी वहाँ विद्यमान हैं, जो समस्त ऋद्धियों तथा भोगों को देने वाले हैं। वन-उपवन आदि से विभूषित हैं तथा स्वर्ण प्रदेशों के समान जान पड़ते हैं।

छठे पर्व में ६२ से ८२ तक वर्णन है—

इस लवणसमुद्र में बहुत से द्वीप हैं जहाँ कल्पवृक्षों के समान आकार वाले वृक्षों से दिशायें व्याप्त हो रही हैं। इन द्वीपों में अनेकों पर्वत हैं जो रत्नों से व्याप्त ऊँचे-ऊँचे शिखरों से सुशोभित हैं। राक्षसों के इन्द्र भीम, अतिभीम तथा उनके सिवाय अन्य देवों के द्वारा आपके वंशजों के लिए ये सब द्वीप और पर्वत दिये गये हैं ऐसा पूर्वपरंपरा से सुनने में आता है। उन द्वीपों में अनेक नगर हैं। उन नगरों के नाम—संध्याकार, मनोह्लाद, सुबेल, कांचन, हरियोधन, जलधिध्वान, हंसद्वीप, भरक्षम, अर्धस्वर्गोत्कट, आवर्त, विघट, रोधन, अमल, कांत,स्फुटतट, रत्नद्वीप, तोयावली, सर, अलंघन, नभोभानु और क्षेम इत्यादि सुन्दर-सुन्दर हैं।

यहाँ वायव्य दिशा में समुद्र के बीच तीन सौ योजन विस्तार वाला, बड़ा भारी वानरद्वीप है। उसमें महामनोहर हजारों अवांतर द्वीप हैं। उस वानर द्वीप के मध्य में रत्न सुवर्ण की लम्बी, चौड़ी शिलाओं से सुशोभित "किष्कु" नाम का बड़ा भारी पर्वत है।

जैसे यह त्रिकूटाचल है वैसे ही वह किष्कु पर्वत है इत्यादि। इस प्रकरण से यह ज्ञात होता है कि इस समुद्र में और भी अनेक द्वीप विद्यमान हैं।

लवणसमुद्र की जगती ८ योजन ऊँची, मूल में १२ योजन, मध्य में ८ एवं ऊपर में ४ योजन प्रमाण विस्तार वाली है। इसके ऊपर वेदिका, वनखंड, देवनगर आदि का पूरा वर्णन जंबूद्वीप की जगती के समान है। इस जगती के अभ्यन्तरभाग में शिलापट्ट और बाह्यभाग में वन हैं। इस जगती की बाह्यपरिधि का प्रमाण १५८११३९ योजन प्रमाण है। यदि जंबूद्वीप प्रमाण १-१ लाख के खंड किये जावें तो इस लवण समुद्र के जंबूद्वीप प्रमाण २४ खंड हो जाते हैं।

भूभ्रमण खण्डन

कोई आधुनिक विद्वान कहते हैं कि जैनियों की मान्यता के अनुसार यह पृथ्वी वलयाकार चपटी गोल नहीं है किन्तु यह पृथ्वी गेंद या नारंगी के समान गोल आकार की है तथा सूर्य, चन्द्र, शनि, शुक्र आदि ग्रह, अश्विनी, भरिणी आदि नक्षत्रचक्र, मेरु के चारों तरफ प्रदक्षिणारूप से अवस्थित हैं, घूमते नहीं हैं। यह पृथ्वी एक विशेष वायु के निमित्त से ही घूमती है। इस पृथ्वी के घूमने से ही सूर्य, चन्द्र, नक्षत्र आदि का उदय, अस्त आदि व्यवहार बन जाता है इत्यादि।

दूसरे कोई वादी पृथ्वी का हमेशा अधोगमन ही मानते हैं एवं कोई-कोई आधुनिक पंडित अपनी बुद्धि में यों मान बैठे हैं कि पृथ्वी दिन पर दिन सूर्य के निकट होती चली जा रही है। इसके विरुद्ध कोई-कोई विद्वान् प्रतिदिन पृथ्वी को सूर्य से दूरतम होती हुई मान रहे हैं। इसी प्रकार कोई-कोई परिपूर्ण जलभाग से पृथ्वी को उदित हुई मानते हैं।

किन्तु उक्त कल्पनायें प्रमाणों द्वारा सिद्ध नहीं होती हैं। थोड़े ही दिनों में परस्पर एक-दूसरे का विरोध करने वाले विद्वान् खड़े हो जाते हैं और पहले-पहले के विद्वान् या ज्योतिष यन्त्र के प्रयोग भी युक्तियों द्वारा बिगाड़ दिये जाते हैं। इस प्रकार छोटे-छोटे परिवर्तन तो दिन-रात होते ही रहते हैं।

इसका उत्तर जैनाचार्य इस प्रकार देते हैं—

भूगोल का वायु के द्वारा भ्रमण मानने पर तो समुद्र, नदी, सरोवर आदि के जल की जो स्थिति देखी जाती है उसमें विरोध आता है।

जैसे कि पाषाण के गोले को घूमता हुआ मानने पर अधिक जल ठहर नहीं सकता है अतः भू अचला ही है भ्रमण नहीं करती है। पृथ्वी तो सतत घूमती रहे और समुद्र आदि का जल सर्वथा जहाँ का तहाँ स्थिर रहे, यह बन नहीं सकता अर्थात् गंगा नदी जैसे

हरिद्वार से कलकत्ता की ओर बहती है, पृथ्वी के गोल होने पर उल्टी भी बह जायेगी, समुद्र और कुओं के जल गिर पड़ेगे। घूमती हुई वस्तु पर मोटा अधिक जल नहीं ठहर कर गिरेगा ही गिरेगा।

दूसरी बात यह है कि पृथ्वी स्वयं भारी है। अधःपतन स्वभाव वाले बहुत से जल, बालू, रेत आदि पदार्थ हैं जिनके ऊपर रहने से नारंगी के समान गोल पृथ्वी हमेशा घूमती रहे और यह सब ऊपर ठहरे रहें, पर्वत, समुद्र, शहर, महल आदि जहाँ के तहाँ बने रहें यह बात असंभव है।

यहाँ पुनः कोई भूभ्रमणवादी कहते हैं कि घूमती हुई इस गोल पृथ्वी पर समुद्र आदि के जल को रोके रहने वाली एक वायु है जिसके निमित्त से समुद्र आदि ये सब जहाँ के तहाँ ही स्थिर बने रहते हैं।

इस पर जैनाचार्यों का उत्तर—जो प्रेरक वायु इस पृथ्वी को सर्वदा घुमा रही है, वह वायु इन समुद्र आदि को रोकने वाली वायु का घात नहीं कर देगी क्या ? यह बलवान् प्रेरक वायु तो इस धारक वायु को घुमाकर कहीं फेंक देगी। सर्वत्र ही देखा जाता है कि यदि आकाश में मेघ छाए हैं और हवा जोरों से चलती है तब उस मेघ को धारण करने वाली वायु को विध्वंस करके मेघ को तितर-बितर कर देती है, वे बेचारे मेघ नष्ट हो जाते हैं या देशांतर में प्रयाण कर जाते हैं।

उसी प्रकार अपने बलवान् वेग से हमेशा भूगोल को सब तरफ से घुमाती हुई जो प्रेरक वायु है, वह वहाँ पर स्थित हुए समुद्र, सरोवर आदि को धारने वाली वायु को नष्ट-भ्रष्ट कर ही देगी अतः बलवान् प्रेरक वायु भूगोल को हमेशा घुमाती रहे और जल आदि की धारक वायु वहाँ बनी रहे, यह नितांत असंभव है।

पुनः भूभ्रमणवादी कहते हैं कि पृथ्वी में आकर्षण शक्ति है अतएव सभी भारी पदार्थ भूमि के अभिमुख होकर ही गिरते हैं। यदि भूगोल पर से जल गिरेगा तो भी वह पृथ्वी की ओर ही गिरकर वहाँ का वहाँ ही ठहरा रहेगा अतः वह समुद्र आदि अपने-अपने स्थान पर ही स्थिर रहेंगे।

इस पर जैनाचार्य कहते हैं कि—आपका कथन ठीक नहीं है। भारी पदार्थों का तो नीचे की ओर गिरना ही दृष्टिगोचर हो रहा है अर्थात् पृथ्वी में एक हाथ का लम्बा चौड़ा गड्ढा करके उस मिट्टी को गड्ढे के एक ओर ढलाऊ ऊँची कर दीजिये। उस पर गेंद रख दीजिये, वह गेंद नीचे की ओर गड्ढे में ही लुढ़क जायेगी। जबकि ऊपर भाग में मिट्टी अधिक है तो विशेष आकर्षण शक्ति के होने से गेंद को ऊपर देश में ही चिपकी रहना चाहिये था, परन्तु ऐसा नहीं होता है अतः कहना पड़ता है कि भले ही पृथ्वी में आकर्षण

शक्ति होवे किन्तु उस आकर्षण शक्ति की सामर्थ्य से समुद्र के जलादिकों का घूमती हुई पृथ्वी से तिरछा या दूसरी ओर गिरना नहीं रुक सकता है।

जैसे कि प्रत्यक्ष में नदी, नहर आदि का जल ढलाऊ पृथ्वी की ओर ही यत्र-तत्र किधर भी बहता हुआ देखा जाता है और लोहे के गोलक, फल आदि पदार्थ स्वस्थान से च्युत होने पर गिरने पर नीचे की ओर ही गिरते हैं।

इस प्रकार जो लोग आर्यभट्ट या इटली, यूरोप आदि देशों के वासी विद्वानों की पुस्तकों के अनुसार पृथ्वी का भ्रमण स्वीकार करते हैं और उदाहरण देते हैं कि—जैसे अपरिचित स्थान में नौका में बैठा हुआ कोई व्यक्ति नदी पार कर रहा है। उसे नौका तो स्थिर लग रही है और तीरवर्ती वृक्ष, मकान आदि चलते हुए दिख रहे हैं परन्तु यह भ्रम मात्र है, तद्वत् पृथ्वी की स्थिरता की कल्पना भी भ्रममात्र है।

इस पर जैनाचार्य कहते हैं कि— साधारण मनुष्य को भी थोड़ा सा ही घूम लेने पर आखों में घूमनी आने लगती है (चक्कर आने लगता है), कभी-कभी खंड देश में अत्यल्प भूकम्प आने पर भी शरीर में कँपकँपी, मस्तक में भ्रांति होने लग जाती है तो यदि डाकगाड़ी के वेग से भी अधिक वेगरूप पृथ्वी की चाल मानी जायेगी तो ऐसी दशा में मस्तक, शरीर,पुराने ग्रह, कूपजल आदि की क्या व्यवस्था होगी।

बुद्धिमान् स्वयं इस बात पर विचार कर सकते हैं।

हस्तिनापुर में निर्मित जम्बूद्वीप रचना

हस्तिनापुर में निर्मित जम्बूद्वीप रचना में—

१. सुदर्शनमेरु नाम से सुमेरु पर्वत एक है।
२. अकृत्रिम ७८ जिनमंदिर में ७८ जिनप्रतिमाएँ हैं।
३. १२३ देवभवनों में १२३ जिनप्रतिमाएं विराजमान हैं।
४. श्रीसीमंधर आदि तीर्थंकर के ६ समवसरण हैं।
५. हिमवान आदि ६ पर्वत हैं।
६. भरत, हैमवत, हरि, विदेह आदि ७ क्षेत्र हैं।
७. पर्वतों के गोमुख से नीचे जटाजूट सहित १४ जिनप्रतिमाएँ हैं।

हस्तिनापुर में निर्मित तेरहद्वीप रचना में—

१. ढाईद्वीप में पाँच मेरु पर्वत हैं।
२. तेरहद्वीप तक ४५८ जिनमंदिर में ४५८ जिन-प्रतिमाएँ हैं।
३. ८२१ देवभवनों में ८२१ जिनप्रतिमाएँ हैं।
४. १७० कर्मभूमियों में १७० समवसरण हैं।
५. लवण समुद्र, कालोदधि समुद्र ये दो समुद्र हैं।
६. एक सिंहासन में १०८ जिनप्रतिमाएँ हैं।
७. एक सिंहासन पर श्रीसीमंधर आदि २० जिन-प्रतिमाएँ हैं।
८. एक सिंहासन पर ऋषभदेव आदि २४ जिन-प्रतिमाएँ हैं।
९. भरत क्षेत्र, ऐरावत क्षेत्र आदि के तीर्थंकरों की शांतिनाथ आदि १६ प्रतिमाएँ हैं।
१०. तीस भोगभूमि हैं। दोनों समुद्रों में कुभोगभूमि हैं।
११. इस तेरहद्वीप रचना में २१२७ जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं।

तीनलोक रचना-

१. तीनलोक में-अधोलोक, मध्यलोक और ऊर्ध्वलोक ये तीन भेद हैं।
२. अधोलोक में निगोद, नरक एवं देवों के स्थान हैं।
३. मध्यलोक में जम्बूद्वीप आदि असंख्यात द्वीप समुद्र हैं। इसी में मनुष्य एवं पशु, पक्षी, ज्योतिषी देव आदि हैं।
४. ऊर्ध्वलोक में स्वर्ग हैं, वहाँ देव-देवियाँ हैं।
५. सबसे ऊपर सिद्धशिला के ऊपर सिद्ध भगवान हैं।

जम्बूद्वीप

अनादिनिधन-मध्यलोक में असंख्यात द्वीप-समुद्रों के बीचों बीच में प्रथम द्वीप नाम जम्बूद्वीप है।

इसमें भरत, हैमवत, हरि, विदेह, रम्यक्, हैरण्यवत और ऐरावत ये सात क्षेत्र हैं।

हम और आप इस भरत क्षेत्र के आर्यखण्ड में हैं।

जम्बूद्वीप के शाश्वत ७८ जिनमंदिर—इस जम्बूद्वीप में बीचोंबीच में सुदर्शनमेरु पर्वत है।

इसमें भद्रसाल, नंदन, सौमनस और पाण्डुक ये चार वन अर्थात् सुन्दर-सुन्दर उद्यान हैं।

इनमें ४ दिशाओं के ४-४ जिनमंदिर ऐसे १६ जिनमंदिर हैं। इस पर्वत की विदिशा में चार गजदंत के ४ जिनमंदिर हैं। इस पर्वत के उत्तर-दक्षिण में जम्बूवृक्ष, शाल्मलि वृक्ष के दो मंदिर हैं।

इस सुमेरु के पूर्व-पश्चिम में ८-८ वक्षार ऐसे १६ वक्षारों के १६ जिनमंदिर हैं।

हिमवान आदि छह पर्वतों—कुलाचलों के ६ जिनमंदिर है। सुमेरु के पूर्व में १६ विदेह देशों के १६ एवं पश्चिम में १६ विदेहों के १६ ऐसे ३२ विदेह क्षेत्रों में बीचोंबीच में एक-एक विजयार्ध ऐसे ३२ विजयार्ध पर्वतों के ३२ जिनमंदिर हैं।

ऐसे ही भरत एवं ऐरावत क्षेत्र के बीच में १-१ विजयार्ध पर्वत के २ जिनमंदिर हैं।

इस प्रकार सुमेरु के १६+गजदंत के ४ + जंबूवृक्ष आदि २+सोलह वक्षार के १६+छह कुलाचलों के ६+विदेह के बत्तीस विजयार्ध के ३२+भरत-ऐरावत के २=७८ जिनमंदिर हैं।

देवभवन—यहाँ हस्तिनापुर में निर्मित जम्बूद्वीप में हिमवान् पर्वत के १० आदि ऐसे १२० देवभवन हैं। जम्बूद्वीप के प्रवेश में जम्बूद्वीप रक्षक अनावृत देव का एक भवन है। इन १२३ देवभवनों में गृह चैत्यालय के समान एक-एक जिनप्रतिमा विराजमान हैं अतः १२३ जिनप्रतिमाएँ हैं।

छह समवसरण—पूर्वविदेह में श्री सीमंधर स्वामी, श्री युगमंधर स्वामी एवं पश्चिम विदेह में श्री बाहु-स्वामी और श्री सुबाहुस्वामी तथा दक्षिण में भरत क्षेत्र के आर्यखण्ड की अयोध्या में भगवान ऋषभदेव तथा ऐरावत क्षेत्र के आर्यखण्ड में श्री बालचन्द्र तीर्थंकर भगवान ऐसे छह भगवन्तों के छह समवसरण के प्रतीक यहाँ गंधकुटी के रूप में चतुर्मुखी छह प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

जम्बूद्वीप में २२१ जिनप्रतिमाएं—इस प्रकार जम्बूद्वीप में ७८ जिनमंदिर १२३ देवभवन के जिनमंदिर व छह समवसरण की ६ चतुर्मुखी प्रतिमाएं ऐसी ७८+१२३+ ६=२०७ जिनप्रतिमाएं विराजमान है तथा गंगा-सिंधु आदि १४ महानदियों के गोमुख से गिरने के नीचे गंगा-आदि देवी के महल की छत पर १४ जटाजूट सहित जिनप्रतिमाएं विराजमान हैं। ऐसे कुल (२०७+१४=२२१) जिनप्रतिमाएं हैं।

इन सभी जिनप्रतिमाओं को मेरा नमस्कार होवे।

जम्बूद्वीप में ७८ जिनमंदिर, ६ भोगभूमि, ३४ कर्मभूमि के ३४ आर्यखण्ड, प्रत्येक भूमि में ५-५ म्लेच्छ खंड ऐसे १७० (३४+५=१७०) हैं। हिमवान, महाहिमवान, निषध, नील, रुक्मी और शिखरी छह पर्वतों पर १-१ ऐसे छह सरोवर हैं। पद्म, महापद्म, तिगिंछ, केशरी महापुंडरीक और पुण्डरीक ये उनके नाम हैं। इन छह सरोवरों के कमलों पर श्री, ह्री, धृति, कीर्ति, बुद्धि और लक्ष्मी ये देवियाँ रहती हैं, वे ही तीर्थंकर की माता की सेवा करने आती हैं।

तेरहद्वीप

तेरहद्वीप रचना में २१२७ जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं।

४५८ अकृत्रिम जिनमंदिर—तेरहद्वीप रचना में प्रथम जम्बूद्वीप में ७८ जिनप्रतिमाएँ हैं। उसे घेरकर लवण समुद्र है। उसे घेरकर धातकीखण्ड द्वीप है। इसमें दक्षिण उत्तर में १-१ इष्वाकार पर्वत हैं। अतः दो खण्ड हो गये।

पूर्व धातकीखण्ड में विजयमेरु है एवं जंबूद्वीप के स्थान पर धात्रीवृक्ष—आंवले का वृक्ष है। शेष सारी रचना जम्बूद्वीप के समान है। अतः यहाँ भी ७८ जिनमंदिर हैं।

ऐसे ही पश्चिम धातकी खण्ड में बीच में अचलमेरु है। शेष रचना पूर्वधातकीखण्ड के समान होने से यहाँ भी ७८ जिनमंदिर हैं।

इस धातकीखण्ड को घेरकर कालोदधिसमुद्र है। इसे घेरकर पुष्करद्वीप है। इसके बीचों-बीच में मानुषोत्तर पर्वत है। अतः इस तरफ के आधे पुष्करद्वीप को पुष्करार्धद्वीप कहते हैं। इसमें भी दक्षिण-उत्तर में इष्वाकार नाम के दो पर्वत है।

इस निमित्त से वहाँ भी पूर्व पुष्करार्धद्वीप और पश्चिम पुष्करार्ध द्वीप दो भेद हो गये हैं।

पूर्व पुष्करार्ध में मंदरमेरु है और पश्चिम पुष्करार्ध में विद्युन्माली मेरु है एवं धातकी वृक्ष की जगह पुष्कर वृक्ष हैं। शेष रचना धातकीखण्ड के समान होने से यहाँ भी ७८-७८ जिनमंदिर हैं।

इस प्रकार ७८ को ५ से गुणा करने पर ७८×५=३९० तीन सौ नब्बे अकृत्रिम जिनमंदिर हो गये। पुनश्च धातकीखण्ड के २ इष्वाकार एवं पुष्करार्ध के २ इष्वाकार इन ४ पर्वतों के ४ जिनमंदिर तथा मानुषोत्तर पर्वत के ४ दिशाओं के ४ जिनमंदिर ये ३९०+४+४=३९८ अकृत्रिम जिनमंदिर ढाईद्वीप में हैं।

आगे चौथे, पाँचवें, छठे, सातवें में जिनमंदिर नहीं है। पुनः आठवें नंदीश्वर द्वीप में चारों दिशाओं में क्रम से १३-१३ ऐसे १३×४=५२ जिनमंदिर हैं।

इसके आगे ९वें, १०वें को छोड़कर ग्यारहवें द्वीप के बीच में कुण्डलवरपर्वत के ४ दिशाओं में ४ जिनमंदिर हैं।

इसके आगे १२वें को छोड़कर तेरहवें रुचकवर द्वीप के बीच में रुचकवर पर्वत पर चारों दिशाओं में १-१ ऐसे ४ मंदिर हैं।

इस प्रकार ढाई द्वीप के ३९८+आठवें द्वीप के ५२+ग्यारहवें द्वीप के ४+तेरहवें द्वीप के ४=४५८ (चार सौ अट्ठावन) ऐसे अकृत्रिम जिनमंदिर हैं।

यहाँ तेरहद्वीप की रचना में ८२१ देवभवनों के ८२१ जिनमंदिर में ८२ जिनप्रतिमाएं हैं।

प्रत्येक जिनमंदिर में १०८-१०८ जिनप्रतिमाएँ हैं किन्तु यहाँ रचना में १-१ प्रतिमा विराजमान हैं, इसके प्रतीक में एक सिंहासन पर १०८ जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं।

इस प्रकार स्वयं सिद्ध अकृत्रिम जिनप्रतिमाओं के समान यहाँ रचना में ४५८+८२१+१०८=ऐसी १३८७ सिद्धप्रतिमाएं विराजमान हैं।

१७० समवसरण—तेरहद्वीप रचना में ढाईद्वीप तक १७० कर्मभूमि हैं। जैसे कि जम्बूद्वीप में ३२ विदेह क्षेत्र व एक भरत क्षेत्र तथा एक ऐरावत क्षेत्र ऐसी ३४ कर्मभूमि हैं। आगे पूर्वधातकीखण्ड, पश्चिमधातकी-खण्ड, पूर्व पुष्करार्ध और पश्चिम पुष्करार्ध में ३४-३४ कर्मभूमि होने से ३४×५=१७० कर्मभूमियाँ हो गई हैं। इन कर्मभूमियों के आर्यखण्डों में भगवान अजितनाथ के समय एक साथ तीर्थंकर उत्पन्न हुए हैं। अतः यहाँ पर १७० कर्मभूमियों में १७० समवसरण बनाये गये हैं। ४ समवसरण ८-८ भूमि सहित हैं। शेष समवसरण गंधकुटी के रूप में हैं। सभी में समवसरण में चतुर्मुखी तीर्थंकरों के प्रतीक में ४-४ जिनप्रतिमाएं होने से १७०×४=६८० जिनप्रतिमाएँ तीर्थंकरों की विराजमान हैं।

अन्य जिनप्रतिमाएं—यहाँ तेरहद्वीप रचना में एक सिंहासन पर विदेह क्षेत्रों के विद्यमान श्री सीमंधर आदि २० तीर्थंकरों की २० प्रतिमाएं विराजमान हैं तथा एक सिंहासन पर श्री ऋषभदेव आदि २४ तीर्थंकर प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

पुनः ५ भरत क्षेत्र की ५ प्रतिमाएं, श्री शांतिनाथ, श्री मुनिचंद्रनाथ, श्री बाहु स्वामी, श्री विमलेन्द्रनाथ एवं श्री सुसंयतनाथ की ५ प्रतिमाएँ हैं। पाँच ऐरावत क्षेत्रों की श्री अनंतवीर्यनाथ, श्री सर्वनाथ, श्री हरिवासवनाथ, श्री मरुदेवनाथ एवं श्री स्वच्छनाथ ऐसे ५ भगवन्तों की ५ प्रतिमाएँ हैं।

तथा च-श्री ऋषभदेव, श्री सीमंधर स्वामी, श्री सुबाहुस्वामी एवं श्री वीरसेन स्वामी इनकी ४ प्रतिमाएँ एवं श्री अजितनाथ एवं श्री महावीर स्वामी की प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

ये तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ ६८०+२०+२४+१६=७४० हैं।

इस प्रकार यहाँ तेरहद्वीप रचना में ४५८+८२१+१०८+६८०+२०+२४+५+५+४+२=२१२७ जिनप्रतिमाएँ विराजमान हैं।

पुनश्च यहाँ भगवान ऋषभदेव की दीक्षा-कल्याणक की प्रतिमा, आहारदान की प्रतिमा, भगवान शांतिनाथ, कुंथुनाथ, अरनाथ की प्रतिमा आदि अन्य प्रतिमाएँ भी विराजमान हैं।

इन सभी जिनप्रतिमाओं को मेरा नमस्कार होवे।

इस प्रकार तेरहद्वीप रचना में पाँच मेरुपर्वत हैं, ४५८ जिनमंदिर हैं। ८२१ देवभवन हैं। १७० कर्मभूमि हैं, जिनमें १७० समवसरण हैं। ३० भोगभूमियाँ हैं। लवणसमुद्र व कालोदधि समुद्र में कुभोगभूमि के प्रतीक में कुछ कुभोगभूमिज मनुष्य दिखाये गये हैं। सुमेरुपर्वत आदि सभी पर्वतों के वर्ण शास्त्र के आधार से दिखाये गये हैं। पर्वतों के सरोवरों में कमलों पर श्री आदि देवियाँ दिखाई गई हैं। यथा स्थान नदी, सरोवर, पर्वत, भोगभूमि, कर्मभूमि दिखाई गई हैं। नंदीश्वर द्वीप अंजनगिरि आदि पर्वत भी शास्त्र के आधार से हैं।

तीन लोक रचना

ये तीन लोक १४ राजु ऊँचा, ७ राजू मोटा—गहरा है। चौड़ाई में नीचे ७ राजु चौड़ा पुनः घटते हुए मध्य में १ राजु पुनः बढ़ते हुए ब्रह्मस्वर्ग के पास (साढ़े तीन राजु ऊपर जाकर) ५ राजु, पुनः घटते हुए १ राजु हो गया है।

इसके ठीक बीच में कुछ कम १३ राजु ऊँची, १ राजु चौड़ी, १ राजु मोटी त्रसनाड़ी है।

अधोलोक—इसमें ७ राजु में १० भाग कीजिए। सबसे नीचे निगोद है। पुनः सातवें, छठे आदि ७ नरक हैं। पुनः दो भाग के नाम हैं—खरभाग, पंकभाग।

इन दोनों भागों में भवनवासी देवों के भवनों में ७७२००००० जिनमंदिर हैं एवं व्यंतर देवों के भवनों में असंख्यात जिनमंदिर हैं।

अधोलोक से ऊपर के ७ राजु में २१ भाग कीजिए।

मध्यलोक—प्रथम भाग १ लाख योजन ऊँचा एवं १ राजु चौड़ा है, यही मध्यलोक है। इसी में असंख्यातद्वीप समुद्रों में सर्वप्रथम द्वीप का नाम जम्बूद्वीप है एवं प्रथम समुद्र का नाम लवणसमुद्र है तथा अंतिम द्वीप का नाम स्वयंभूरमणद्वीप पुनः सबसे अंत में स्वयंभूरमण समुद्र है।

इसी मध्यलोक में तेरहद्वीपों तक ४५८ जिनमंदिर हैं। असंख्यात द्वीप-समुद्रों तक भवनवासी देवों के अगणित भवनपुर, आवास हैं। व्यंतर देवों के असंख्यात भवनपुर, आवास हैं। ये पर्वतों पर देवभवनों के रूप में हैं तथा समुद्र, नदी, सरोवर, वृक्ष आदि पर आवास बने हुए हैं। इन सभी में अगणित एवं असंख्यातों जिनमंदिर हैं।

सूर्य, चन्द्रमा नक्षत्र आदि ज्योतिषी देवों के भी मध्यलोक में असंख्यात विमानों में असंख्यात जिनमंदिर हैं।

इस मध्यलोक में ही ढाई द्वीपों तक तीर्थंकर, चक्रवर्ती, नारायण आदि महापुरुष होते हैं। मनुष्यों का अस्तित्व यहीं तक है। पशु, पक्षी, कीट, पतंगे आदि इस मध्यलोक में ही होते हैं।

अर्हंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय, साधु, जिनधर्म, जिनागम, जिनचैत्य और जिनचैत्यालय ये नवदेवता इन ढाईद्वीपों में ही हैं। कृत्रिम जिनमंदिर, जिन-प्रतिमाएं, भूत, भविष्यत्, वर्तमानकाल की अपेक्षा अनंतानंत हैं। पंचकल्याणक तीर्थ, सिद्धक्षेत्र एवं अतिशय क्षेत्र भी तीनकाल की अपेक्षा अनंतानंत हैं। अधोलोक एवं ऊर्ध्वलोक में केवल जिनचैत्य, चैत्यालय ये दो देवता ही हैं।

ऊर्ध्वलोक—मध्यलोक से ऊपर यह २० भागों में विभक्त है।

सौधर्म, ईशान आदि १६ स्वर्ग, दो-दो युगल एक साथ हैं, अतः ८ भागों में १६ स्वर्ग हैं। नव भागों में ९ ग्रैवेयक हैं। एक भाग में नव अनुदिश एवं एक भाग में पाँच अनुत्तर हैं। ऐसे १९ भागों में इन स्वर्ग, ग्रैवेयक आदि में ८४९७०२३ जिनमंदिर हैं।

सिद्धशिला—ऊर्ध्वलोक में दूसरे भाग में सिद्धशिला है। यह ४५ लाख योजन विस्तृत अर्धगोलक सदृश बीच में ८ योजन ऊँची ऐसी सिद्धशिला है।

ढाई द्वीप तक मानुषोत्तर पर्वत तक ही मनुष्यों का आवास है। यह ढाईद्वीप भी ४५ लाख योजन विस्तृत है। इसे मनुष्यलोक भी कहते हैं। यहीं से मनुष्य मुनि बनकर कर्मों का नाश कर मोक्ष प्राप्त करते हैं और एक समय में ऊर्ध्वगमन कर सिद्धशिला के ऊपर विराजमान हो जाते हैं।

सिद्धशिला के ऊपर सिद्ध भगवान हैं—

सिद्धशिला से ऊपर ३७०००००, ८६०००, ९७५ धनुष ऊपर जाकर ५२५ धनुष की उत्कृष्ट अवगाहना वाले सिद्ध भगवान विराजमान हैं। जैसे कि श्री बाहुबली ५२५ धनुष ऊँचे थे। एक धनुष में ४ हाथ होते हैं।

जघन्य अवगाहना वाले मनुष्य सिद्धशिला से ३७ लाख, ८७ हजार, ४९९ धनुष अर्ध हाथ प्रमाण ऊपर जाकर विराजमान हैं। मध्यम अवगाहना वाले उत्कृष्ट से नीचे और जघन्य के ऊपर अनेक अवगाहना से सहित हुए सिद्धशिला से ऊपर विराजमान हैं।

इन सभी सिद्ध भगवन्तों को मेरा अनंत-अनंतबार नमस्कार होवे।

तीनलोक के अकृत्रिम जिनमंदिर—तीनों लोकों में ७७२००००००+४५८+८४९७०२३= ८५६९७४८१ अकृत्रिम जिनमंदिर हैं। ९२५ करोड़, ५३ लाख, २७ हजार, ९४८ जिनप्रतिमाएँ हैं। व्यंतर देव व ज्योतिष्क देवों के असंख्यात जिनमंदिर हैं। सभी में १०८-१०८ जिनप्रतिमाएँ हैं।

नवनिर्मित तीनलोक रचना—यहाँ जम्बूद्वीप-हस्तिनापुर में नवनिर्मित तीनलोक रचना में अधोलोक में नारकी दिखाये गये हैं। इसी अधोलोक में प्रथम पृथ्वी के खरभाग और पंकभाग में भवनवासी के १० भेद व व्यंतर देवों के ८ भेदों के १-१ मंदिर ऐसे १०+८=१८ मंदिर स्थापित हैं। उन १८ प्रकार के इंद्रों के महल के आगे के प्रतीक में १८ चैत्यवृक्ष हैं। उनमें भी ४-४ प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

मध्यलोक में—ढाईद्वीप में पाँच मेरु दिखाये गये हैं एवं श्री ऋषभदेव, शांतिनाथ आदि की प्रतिमाएँ विराजमान हैं। यहाँ मध्यलोक में मनुष्य और तिर्यंच दिखाये गये हैं। यहीं पर सूर्य, चंद्र, ग्रह, नक्षत्र व ताराओं के विमान दिखाये गये हैं।

मध्यलोक के ऊपर सोलह स्वर्गों में १-१ मंदिर हैं। सौधर्मेन्द्र के महल आदि बने हैं। इंद्र सभा बनाई गई हैं। चैत्यवृक्ष एवं मानस्तंभ तथा नीलांजना आदि नृत्यांगनाएँ हैं। यथास्थान इंद्र-इन्द्राणी, देव-देवियाँ दिखाये गये हैं।

इनसे ऊपर नवग्रैवेयक में ९ मंदिर, नव अनुदिश के ९ मंदिर एवं पाँच अनुत्तर के ५ मंदिर हैं। यथास्थान अहमिन्द्र दिखाये गये हैं।

अनंतर सिद्धशिला पर पद्मासन एवं खड्गासन सिद्धप्रतिमाएँ विराजमान हैं।

इस प्रकार यहाँ तीनलोक रचना में अधोलोक में १०+८=१८ मंदिर, मध्यलोक में पाँच मेरु में प्रतिमाएँ, मध्यलोक में प्रतिमाएँ एवं सूर्य, चंद्र में प्रतिमा विराजमान हैं। ऊर्ध्वलोक में १६+९+९+५=३९ मंदिर हैं। ऐसे १०+८+१६+९+९+५=५७ मंदिरों में प्रत्येक में ४-४ प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

अधोलोक में १८ एवं १६ स्वर्गों में १६ ऐसे १८+१६=३४ चैत्यवृक्षों में ४-४ प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

इस प्रकार ५७ मंदिर में ५७×४=२२८ पुनः ३४ चैत्यवृक्षों की ३४×४=१३६, मध्यलोक

में मेरु की ४०+२ सूर्य, २ चंद्र की ४ तथा अन्य २८ प्रतिमाएँ एवं सिद्धशिला की ४ पद्मासन एवं ८ खड्गासन ऐसी १२ प्रतिमाएँ हैं। कुल मिलाकर २२८+१३६+४०+४+२८+१२= ४४८ प्रतिमाएँ यहाँ विराजमान हैं। इन सभी ४४८ जिनप्रतिमाओं को तीनलोक भ्रमण समापन हेतु मेरा मन, वचन, कायपूर्वक अनंत-अनंत बार नमस्कार होवे।

तीनलोक का ध्यान—प्रतिदिन खड़े होकर दोनों पैर फैलाकर कमर पर दोनों हाथ रखकर अपने आप को तीन लोक बनाकर ध्यान करना चाहिए। ध्यान में तीन लोक के जिनमंदिरों को, प्रतिमाओं को, नवदेवताओं को स्थापित करने से यह शरीर पवित्र हो जायेगा। मन पवित्र होगा, वचन पवित्र होंगे। शरीर पवित्र होकर स्वस्थ होगा पुनः अपने आपको सिद्धशिला तक ले जाना चाहिए। जिससे एक न एक दिन अपनी आत्मा नियम से सिद्ध परमात्मा बन जायेगी। यही इस तीनलोक के ध्यान का सार है।

जम्बूद्वीप परिसर के जिनमंदिर

जंबूद्वीप की ३० एकड़ पवित्र भूमि पर संस्थान के द्वारा संचालित विभिन्न योजनाओं/रचनाओं का संक्षिप्त विवरण निम्नांकित है—

१. जंबूद्वीप रचना-जिनेन्द्र भगवान की २०७ प्रतिमाओं से पावन भारतीय शिल्प और जैन भूगोल का अद्वितीय उदाहरण, आधुनिक आकर्षणों-बिजली के फौव्वारे, नौका-विहार इत्यादि सहित।

२. कमल मंदिर-भगवान महावीर की अतिशयकारी खड्गासन प्रतिमा इस मंदिर में विराजमान हैं।

३. ध्यान मंदिर-२४ तीर्थंकर भगवन्तों की प्रतिमाओं सहित **'ह्रीं'** रचना इस मंदिर में विराजमान हैं, जो कि 'ध्यान' (शृंग्दह) करने हेतु उत्तमोत्तम माध्यम हैं।

४. त्रिमूर्ति मंदिर-भगवान आदिनाथ, भरत एवं बाहुबली की खड्गासन प्रतिमाओं से इस मंदिर का नाम सार्थक है। कमल पर विराजमान भगवान नेमिनाथ एवं पार्श्वनाथ से इस मंदिर की शोभा द्विगुणित हो गयी है।

५. वासुपूज्य मंदिर-इस मंदिर में १२वें तीर्थंकर-वासुपूज्य स्वामी की खड्गासन प्रतिमा विराजमान हैं।

६. शांतिनाथ मंदिर-जिन भगवन्तों के गर्भ, जन्म, तप और ज्ञान कल्याणकों से हस्तिनापुर की भूमि परम-पावन हुई है, उन शांति-कुंथु और अरहनाथ भगवंतों की खड्गासन प्रतिमाएँ इस मंदिर में विराजमान हैं।

७. ॐ मंदिर-अरिहंत, सिद्ध, आचार्य, उपाध्याय और साधु परमेष्ठियों की प्रतिमाओं सहित ॐ (ओम) रचना इस मंदिर में विराजित है।

८. विद्यमान बीस तीर्थंकर मंदिर-इस मंदिर में विदेह क्षेत्र के विद्यमान २० तीर्थंकरों की प्रतिमाएँ बीस कमलों पर विराजमान हैं।

९. सहस्त्रकूट मंदिर-जिनेन्द्र भगवान की १००८ प्रतिमाओं सहित।

१०. भगवान ऋषभदेव मंदिर-धातु निर्मित भगवान ऋषभदेव की मूलनायक प्रतिमा एवं अन्य जिन प्रतिमाओं सहित।

११. भगवान ऋषभदेव कीर्तिस्तंभ-'भगवान ऋषभदेव अन्तर्राष्ट्रीय निर्वाण महामहोत्सव वर्ष' में निर्मित, भगवान के जीवन चरित्र को प्रदर्शित करने वाला, ८ प्रतिमाओं से समन्वित ३१ फुट ऊँचा कीर्तिस्तंभ।

१२. तेरहद्वीप जिनालय-इस मंदिर के अंदर मध्यलोक के तेरहद्वीपों की अकृत्रिम रचना का अति सुन्दरता के साथ दिग्दर्शन कराया गया है, जिसमें पंचमेरु पर्वतों के साथ-साथ कुल २१२७ प्रतिमाएँ विराजमान हैं।

१३. अष्टापद दिगम्बर जैन मंदिर-इस मंदिर के अंदर प्रथम जैन तीर्थंकर भगवान ऋषभदेव की निर्वाणभूमि अष्टापद-कैलाशपर्वत की आकर्षक प्रतिकृति विराजमान है। कैलाशपर्वत का ही दूसरा नाम अष्टापद है। ४ फरवरी २००० को लाल किला मैदान, दिल्ली में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी द्वारा इस प्रतिकृति के समक्ष निर्वाणलाडू चढ़ाकर इसका उद्घाटन किया गया।

१४. नवग्रह शान्ति जिनमंदिर—उत्तर भारत में प्रथम बार निर्मित इस नवग्रहशांति जिनमंदिर में नवग्रह अरिष्ट निवारक नव तीर्थंकरों की धातु निर्मित सुन्दर प्रतिमाएँ विराजमान हैं, जिनके दर्शन-पूजन करके भक्तगण अपने ग्रहों की शांति करते हुए देखे जाते हैं।

१५. तीर्थंकरत्रय की विशाल प्रतिमाएँ—हस्तिनापुर में जन्मे तीर्थंकर श्री शांतिनाथ-कुंथुनाथ-अरहनाथ भगवान की ३१-३१ फुट की खड्गासन प्रतिमाएँ जम्बूद्वीप स्थल पर विराजमान हुई हैं। इनके विशाल मंदिर का निर्माण द्रुतगति से चल रहा है।

१६. तीनलोक की भव्य रचना—त्रिलोकसार, तिलोयपण्णत्ति आदि करणानुयोग ग्रंथों के अनुसार तीन लोक की सुन्दर रचना का निर्माण मेरी प्रेरणा से हुआ है। इसमें अत्याधुनिक सुविधा के लिए लिफ्ट लगाई गई है, जिससे सभी भक्तगण सिद्धशिला तक के दर्शन प्राप्त कर लेते हैं।

१७. चन्द्रप्रभु जिनमंदिर—नवनिर्मित इस मंदिर में ९ फुट उत्तुंग भगवान चन्द्रप्रभु की प्रतिमा विराजमान है।

१८. भगवान शांतिनाथ समवसरण मंदिर—इस मंदिर का निर्माण द्रुतगति से चल रहा है।

।।वर्धतां जिनशासनम्।।

जम्बूद्वीप के चार्ट

जम्बूद्वीप के पर्वत और क्षेत्र

चार्ट (क)

पर्वत और क्षेत्रों के नाम	विस्तार (दक्षिण उत्तर)	लम्बाई पूर्व पश्चिम	(जघन्य) लम्बाई (उत्कृष्ट	ऊँचाई
क्षेत्र-भरत क्षेत्र	$526\frac{6}{19}$	×	$14471\frac{5}{19}$	
पर्वत-हिमवान्	$1052\frac{12}{19}$	$14471\frac{5}{19}$	$24931\frac{18}{19}$	100
क्षेत्र-हैमवत	$2105\frac{5}{19}$	$24931\frac{18}{19}$	$37674\frac{6}{19}$	
पर्वत-महाहिमवान्	$4210\frac{10}{19}$	$37974\frac{16}{19}$	$53931\frac{6}{19}$	200
क्षेत्र-हरि	$8421\frac{1}{19}$	$53931\frac{6}{19}$	$73901\frac{17}{19}$	
पर्वत-निषध	$16842\frac{2}{19}$	$73901\frac{17}{19}$	$94156\frac{2}{19}$	400
क्षेत्र-विदेह	$33684\frac{4}{19}$	$94156\frac{9}{19}$	मध्य में उत्कृष्ट 100000 योजन	
पर्वत-नील	$16842\frac{2}{19}$	$73901\frac{17}{19}$	$94156\frac{2}{19}$	400
क्षेत्र-रम्यक	$8421\frac{1}{19}$	$53931\frac{6}{19}$	$73901\frac{17}{19}$	
पर्वत-रुक्मि	$4210\frac{10}{19}$	$37974\frac{16}{19}$	$53931\frac{6}{19}$	200
क्षेत्र-हैरण्यवत	$2105\frac{5}{19}$	$24931\frac{18}{19}$	$37674\frac{16}{19}$	
पर्वत-शिखरी	$1052\frac{12}{19}$	$14471\frac{5}{19}$	$24931\frac{18}{19}$	100
क्षेत्र-ऐरावत	$526\frac{6}{19}$		$14471\frac{5}{19}$	

वर्ण	पर्वत की नींव	कूट	ऊँचाई	चौड़ाई
सुवर्णमय	25 यो.	11	25 यो.	मूल में 25, मध्य में $18\frac{3}{4}$ अंत में $12\frac{1}{2}$
रजतमय	50 यो.	8	50 यो.	मूल में 50, मध्य में $37\frac{1}{2}$ अंत में 25
तप्तसुवर्ण	100 यो.	9	100 यो.	मूल में 100, मध्य में 75, अंत में 50
वैडूर्य मणि	100 यो.	9	100 यो.	मूल में 100, मध्य में 75, अंत में 50
रजत	50 यो.	8	50 यो.	मूल में 50, मध्य में $37\frac{1}{2}$ अंत में 52
हेममय	25 यो.	11	25 यो.	मूल में 25, मध्य में $18\frac{3}{4}$ अंत में $12\frac{1}{2}$

पर्वत और क्षेत्र चार्ट (ख)

पर्वत और क्षेत्र	विस्तार (दक्षिण उत्तर)	(जघन्य) लम्बाई पूर्व पश्चिम	लम्बाई (उत्कृष्ट)	ऊँचाई
पर्वत-विजयार्ध	50	$9748\frac{12}{19}$	$10720\frac{11}{19}$	25
क्षेत्र-दक्षिण भरत	$238\frac{3}{19}$	×	$9748\frac{12}{19}$	
क्षेत्र-उत्तर भरत	$238\frac{3}{19}$	$10720\frac{11}{19}$	$14471\frac{4}{19}$	
ऐसे ही ऐरावत का विजयार्ध और दक्षिण उत्तर ऐरावत का प्रमाण है।				
पर्वत-विजयार्ध	50	$9748\frac{13}{19}$	$10720\frac{11}{19}$	25
क्षेत्र-दक्षिण ऐरावत	$238\frac{3}{19}$	$10720\frac{11}{19}$	$14471\frac{5}{19}$	
क्षेत्र-उत्तर ऐरावत	$238\frac{3}{19}$	×	$9748\frac{12}{19}$	

संख्या	नाम	विस्तार		लम्बाई	ऊँचाई
16	वक्षार पर्वत	500	×	$16512\frac{2}{19}$	निष.नी. के पास 400 नदी के पास 500
32	विदेह क्षेत्र	$2212\frac{7}{8}$	×	$16512\frac{2}{19}$	×
4	गजदंत	500	×	$30209\frac{6}{19}$	निष.नी. के पास 400, सुमेरु के पास 500
32	विदेह के विजयार्ध	50	×	$2212\frac{6}{19}$	25
4	यमकगिरि	मूल में 1000, मध्य में 750, अंत में 500 यो. गोल हैं।	ये पर्वत गोल हैं		2000 यो.
8	दिग्गज पर्वत	ये पर्वत गोल हैं	मू.में 100.,म.में 75, अंत में 50 यो.		100 यो.
200	कांचनगिरि	कांचन पर्वत गोल हैं	मू.में विस्तार 100 म.में 75, अं.में 50		100 यो. 100 यो.
4	नाभिगिरि	मू.1000 यो.,म. 750, अंत में 500 यो. गोल हैं।			1000 यो.
34	वृषभगिरि	मू.1000 यो., म. 75, अंत में 50 यो. गोल हैं।			100 यो.

वर्ण	पर्वत की नींव	कूट	लम्बाई	चौड़ाई
चाँदी का	6-1/2	9	6-1/4	मू.6-1/4 मध्य में 4 यो. 11/4 कोस, अंत में 3 यो. 1/2 कोस।
चाँदी	6-1/4	9	6-1/4	मू.में 6-1/4, मध्य 4 यो. 1-1/4, कोस, अंत में 3 यो. 1/2 कोस

वर्ण	नींव	कूट	ऊँचाई	चौड़ाई
सुवर्णमय	100 सर्वत्र 125 चतुर्थ भाग	सभी पर 4-4	नि.नी. के पास 100 यो.सी. सी.के 125 यो.	
ऊँचाई				
सौ. रजत, विद्यु.स्व.	100 सर्वत्र	गंध.सौ.7	सु.के पास 125	मू.में 6-1/4 मध्य 4
गंध, स्व.माल्य वैडूर्य	125 चतुर्थ भाग	वि.मा. 9	यो. निष.नी. के पास 100 यो. म.में यथायोग्य	यो. 11/4 कोस, अंत में 3 यो. 1/2 कोस 1/2 कोस
चाँदी के	6-1/6 योजन	सभी पर 9-9	6-1/4	
स्वर्णमय	25 योजन			
श्वेत	25 योजन			
विचित्र रत्नमय				

चार्ट (ख) छब्बीस सरोवर

नाम	कहाँ हैं?	लम्बाई	चौड़ाई	गहराई	मुख्य कमल	जल से ऊँचाई
पद्म	हिमवान पर	1000	500	10	1 यो.	1/2 यो.
महापद्म	महाहिमवान पर	2000	1000	20	2 यो.	1 यो.
तिगिञ्छ	निषध पर	4000	2000	40	4 यो.	2 यो.
केसरी	नील पर	4000	2000	40	4 यो.	2 यो.
पुण्डरीक	रूक्मि पर	2000	1000	20	2 यो.	1 यो.
महापुण्डरीक	शिखरी पर	1000	500	10	1 यो.	1/2 यो.

नदी के मध्य	लम्बाई	चौड़ाई	गहराई	मुख्य कमल	जल से ऊँचा
सीता के सरोवर 10	1000	500 या नदी की चौ. प्रमाण	10	1 को.	1/2
सीतोदा के सरोवर 10	1000	,,.	10	1 को.	1/2
सीता के मध्य 10	1000	,,.	10	1 को.	1/2
सीतोदा के मध्य 10	1000	500 या नदी की चौ. प्रमाण		1 को.	1/2

इन सब सरोवरों के चारों तरफ वेदिका है और 1/2 योजन चौड़े वनखण्ड हैं।

(ख) सरोवर

मुख्य पर निवास	परिवार कमल	परिवार देव आदि	मुख्य देवी का भवन	परिवार कमलों का विस्तारादि
श्रीदेवी	140115+1 मुख्य कमल	श्रीदेवी के इतने ही	1 को. लं., 3/4 को. ऊँचा 1/2 को. चौड़ा	मुख्य कमल से अर्ध हैं
ह्रीदेवी	180230+1	ह्री ''	2 को. लं., 1-1/2 को. ऊँचा, 1 को. चौड़ा	''
धृति	560470+1	धृति ''	4 को.लं., 3 को. ऊँचा, 2 को. चौड़ा	''
कीर्ति	560460+1	कीर्ति ''	4 को.लं., 3 को. ऊँचा, 2 को. चौड़ा	''
बुद्धि	280230+1	बुद्धि ''	2 को.लं., 1-1/2 को. ऊँचा, 1 को. चौड़ा	''
लक्ष्मी	140115+1	लक्ष्मी ''	1 को.लं., 1-3/4 को. ऊँचा, 1/2 को. चौड़ा	''

मुख्य पर निवास	परिवार कमल	परिवार देवादि
नाग कुमार देव या नागकुमारी	140115	नाग कु. के उतने ही
''	''	''
''	''	''
''	140115	''

इन सभी कमलों में जिनभवन हैं। ये सब कमल पृथ्वीकायिक हैं।

जम्बूद्वीप का नदियाँ
चार्ट (क)

नदियों के नाम	उद्गम स्थान	उद्गम का प्रमाण	उद्गम का प्रवेश	गहराई उद्गम में	गहराई प्रवेश में	उद्गम तोरण
गंगा सिंधु	पद्म सरोवर से	6-1/4	62-1/2	1/2 कोस	5 को.	9-3/8
रोहित रोहितास्या	महापद्म से रोहित पद्म में रोहितास्या	12-1/2	125	1 कोस	10 को.	18/-9/8
हरित् हरिकांता	तिगिञ्छ से हरित् महापद्म से हरिकांता	25	250	2 कोस	20 को.	37-4/8
सीता सीतोदा	केसरी से सीता तिगिञ्छ से सीतोदा	50	500	4 कोस	40 को.	76 यो.
नारी-नरकांता	पुंडरीक से-नारी केसरी से नरकांता	25	250	2 कोस	20 को.	37-4/8
सुवर्ण रूप्यकूला	महापुंडरीक से सुवर्ण पुंडरीक से रूप्यकूला	12-1/2	125	1कोस	10 को.	18-9/8
रक्ता रक्तोदा	महापुंडरीक से रक्ता रक्तोदा	6-1/4	62-1/2	1/2 कोस	5 को.	9-3/8
विभंगा नदी 12 हैं	नील, निषध की तलहटी के कुण्ड	12-1/2	125	1 कोस	10 को.	18-6/8
गंगा सिंधु 16 विदेह की	नील की तलहटी के कुण्ड से	6-1/4	62-1/2	1/2 कोस	5 को.	9-3/8
रक्ता रक्तोदा 16 विदेह की	निषध की तलहटी के कुण्ड से	6-1/4	62-1/2	1/2 कोस	5 को.	9-1/8

इन सभी नदियों के दोनों तरफ वेदी और 1/2 योजन के उपवन खंड हैं। जिनमें देवप्रासाद, वापिका, जल यंत्र आदि विद्यमान हैं।

प्रवेशतोरण	परिवार नदियाँ	गिरने के कुण्ड	विजयार्ध गुफा में प्रवेश के समय	किस क्षेत्र में हैं	जलधारा की मोटाई
93-3/4	14000×2=28000	60 यो.	8 यो.	भरत	25 यो.
187-1/2	28000×2=56000	120	नाभिगिरि को 1/2 यो. छोड़कर मुड़ जाती है	हैमवत	50
375	56000×2=1,12000	240	नाभिगिरि को 1/2 यो. छोड़कर	हरि	100
50	84000×2=1,68000	480	सुमेरु को अर्ध यो. छोड़कर सीतोदा विद्युत्प्रभ की गुफा में सीता माल्यवान की	विदेह	200
375	56000×2=1,12000	240	नाभि.को 1/2 यो. छोड़कर	रम्यक	100
187-1/2	28000×2=56000	120	नाभि.को 1/2 योजन छोड़कर	हैरण्यवत	50
93-3/4	14000×2=28000	60	विजयार्ध की गुफा से 8 योजन	ऐरावत	25
187-1/2	28000×12=3,36000	+	विदेह में	पूर्व-पश्चिम विदेह में	
93-3/4	14000×2=28000 प्रत्येक की 28000×16 =4,48000	+	विदेह में विजयार्ध की गुफा से 8 यो.	कच्छा आदि 16 देशों में	
93-3/4	14000×2=28000 सभी की 28000×16 =4,48000	+	विदेह में विजयार्ध की गुफा से 8 यो.	मंगलावती आदि 16 देशों में	

ये वेदिकायें अनेक तोरण द्वार जिनप्रतिमाओं से सुशोभित हैं।

प्रशस्ति

तीर्थंकर महावीरं, त्रिशुद्ध्या प्रणमाम्यहम्।
यस्य कृपाप्रसादेन, तरिष्यामि भवाम्बुधिम्।।१।।

शून्यखपंचद्वयंकेऽस्मिन्, वीराब्दे कार्तिके सिते।
मयापूर्यत पूर्णायां, जंबूद्वीपाख्यया कृतिः।।२।।

जंबूद्वीपस्य क्षेत्रेऽत्र, निर्माणप्रेरणा कृता।
सापि पूर्णा भवेत् शीघ्रं, भव्यानां हर्षकारिणी।।३।।

ज्ञानमत्यार्यिका साहं, तीर्थकृद् भक्तिप्रेरिता।
धर्मप्रभावनाभावः, सर्वकार्येषु केवलम्।।४।।

अहिंसा परमो धर्मो, यावज्जैनेंद्रशासनम्।
तावद्ग्रन्थोऽप्ययं स्थेयात्, जैनागमं प्रकाशयेत्।।५।।

अर्थ—तीर्थंकर श्री महावीर स्वामी को मैं मन, वचन, कायपूर्वक नमस्कार करती हूँ कि जिनकी कृपाप्रसाद से संसार समुद्र से तिरूँगी। वीर निर्वाण संवत् २५०० में कार्तिक शुक्ला पूर्णिमा के दिन मैंने यह ''जंबूद्वीप'' पुस्तक लिखकर पूर्ण की है। इस हस्तिनापुर क्षेत्र पर जंबूद्वीप निर्माण की प्रेरणा भी दी है। यह जंबूद्वीप रचना भी शीघ्र ही पूर्ण होवे और भव्यों को हर्ष प्रदान करने वाली होवे। मैं ज्ञानमती आर्यिका तीर्थंकर भगवंतों की भक्ति से प्रेरित होकर ही कार्य कर रही हूँ। सभी कार्यों में केवल मेरी धर्मप्रभावना की ही भावना है। जब तक 'अहिंसा परमो धर्मः' नाम से जिनेन्द्रदेव का शासन विद्यमान है तब तक यह ग्रन्थ भी पृथ्वीतल पर स्थित रहे और जैन आगम को—जैन भूगोल को दिखलाता रहे।।१ से ५।।

१. ईसवी सन् १९७४।